स्व–निर्देशित अध्ययन सामग्री
Self-Instructional Learning Material

मास्टर ऑफ आर्ट्स (शिक्षाशास्त्र)

एम. ए. (शिक्षाशास्त्र)

अन्तिम वर्ष

शिक्षा तकनीक के उद्देश्य

(Purpose of Education Techniques)

(चतुर्थ प्रश्न पत्र)

दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत शिक्षा केन्द्र
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय
चित्रकूट, सतना (म.प्र.) – 485334

शिक्षा तकनीक के उद्देश्य
(Purpose of Education Techniques)

संस्करण–2016–17

प्रेरणा एवं मार्गदर्शन :
प्रो. नरेश चन्द्र गौतम
कुलपति
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

सम्पर्क सूत्र :
निदेशक, दूरवर्ती शिक्षा
दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत शिक्षा केन्द्र
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)
दूरभाष– 07670–265460, इ–मेल– distance.gramodaya@gmail.com, website: www.mgcgvchitrakoot.com

प्रकाशक :
कुलसचिव
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

कापीराइट © : महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

आभार : यह अध्ययन सामग्री संबंधित पाठ्यक्रम और विषय के लिए विशेषज्ञों द्वारा तैयार की गई है। अध्ययन सामग्री को सरल, सुरुचिपूर्ण और बोधगम्य बनाने की दृष्टि से अनेक स्रोतों से प्रेरणा, संदर्भ और सामग्री ली गई है। सभी के प्रति आभार। अध्ययन सामग्री में व्यक्त विचार लेखक के अपने हैं। विश्वविद्यालय का इससे सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

संदेश

महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय की स्थापना मध्यप्रदेश शासन द्वारा एक पृथक अधिनियम से 1991 में सुप्रसिद्ध समाजसेवी पद्मविभूषण नानाजी देशमुख के प्रेरणा और प्रयासों से चित्रकूट में मंदाकिनी के तट पर हुई। विश्वविद्यालय का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण विकास के लिए आवश्यक मानव संसाधन तैयार करना है। विगत 25 वर्षों की समर्पित सेवाओं में विश्वविद्यालय ने ज्ञान–विज्ञान के विविध आयामों पर अपने शिक्षा, शोध, प्रशिक्षण और प्रसार कार्यों से छाप छोड़ी है।

ग्रामीण क्षेत्र में संसाधनों के अभाव तथा सामाजिक–पारिवारिक परिस्थितियों के कारण निरंतरता से अध्ययन करने में बाधायें आती हैं। विश्वविद्यालय ने इस समस्या के समाधान के लिए गुणवत्तायुक्त दूरवर्ती शिक्षा को प्रत्येक ग्रामीण के घर–आँगन तक पहुँचाने का संकल्प लिया है। विश्वविद्यालय का दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत शिक्षा केन्द्र इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सतत् प्रयत्नशील है।

मुझे प्रसन्नता है कि दूरवर्ती शिक्षा के विद्यार्थियों को स्वनिर्देशित अध्ययन सामग्री मुद्रित और व्यवस्थित रूप में पहुँचाये जाने का यह प्रयास न सिर्फ दूरवर्ती शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ायेगा बल्कि छात्रों को गहराई से अध्ययन करने की दिशा में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा।

प्रो. नरेश चन्द्र गौतम
कुलपति

शिक्षा तकनीक के उद्देश्य
(Purpose of Education Techniques)

शिक्षा तकनीकी पाठ्यक्रम के उद्देश्य

1. शिक्षा तकनीकी का अर्थ, प्रकृति, क्षेत्र एवं इसके महत्वपूर्ण घटकों साफ्टवेयर एवं हार्डवेयर के बारे में छात्रों को जानकारी देना।
2. छात्रों को निर्देशन व सम्प्रेषण के माध्य के अन्तर को समझना जिससे कि वे अभिक्रमित अनुदेशन का सही प्रकार से निर्माण कर सकें।
3. भविष्य के शिक्षण में सुधार के लिये स्तर योजना एवं शिक्षण प्रतिमान के बारे में छात्रों को जानकारी देना।
4. छात्रों को प्रोग्राम्ड अनुदेशन व शिक्षा तकनीकी के शोधों की जानकारी देना।
5. छात्रों को शिक्षा तकनीकी के नवीनतम शोधों की एवं शिक्षा तकनीकी के संटरों की जानकारी देना।

संदर्भ ग्रन्थ

1. डॉ. एस.पी. कुलश्रेष्ठ - शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार
2. डॉ. रामलाल सिंह - शैक्षिक तकनीकी एवं मूल्यांकन
3. जे.सी. अग्रवाल - शिक्षा तकनीकी एवं प्रबन्धन
4. आर.के.शर्मा - शैक्षिक तकनीकी की आवश्यकतायें और प्रबन्ध
5. भूषण एस. - शैक्षिक तकनीकी

NOTES

शिक्षा तकनीकी का अर्थ :

शिक्षा तकनीकी एक ऐसी प्रविधि विज्ञान है। जिसके द्वारा शिक्षा के उद्देश्यो को प्राप्त किया जा सकता है। इसका क्षेत्र केवल उद्देश्यो को निर्धारित करने तक ही सीमित नही है अपितु यह उद्देश्यो को व्यावहारिक रूप मे परिभाषित करने में सहायता करना है। शिक्षा तकनीकी मांटेसरी किडंर गार्टन आदि शिक्षण पद्धतियो की भाँति कोई शिक्षक पद्धति नही है वरन् यह एक ऐसा विज्ञान है जिसके आधार पर शिक्षा के विशिष्ट उद्देश्यों की अधिकतम प्राप्ति के लिये विभिन्न आव्यूह का निधरिण तथा विकास किया जा सकता है।

परिभाषाएँ :

शिक्षा तकनीकी की अनेक परिभाषायें दी गयी है, उनके विश्लेषण से शिक्षा तकनीकी का अर्थ स्पष्ट किया जा सकता है ।

लेथ के अनुसार : अधिगम तथा अधिगम की परिस्थितियों के वैज्ञानिक ज्ञान का प्रयोग जब शिक्षा तथा प्रशिक्षण के सुधारने तथा प्रभावशाली बनाने में किया जाता है। तब उसे शिक्षा तकनीकी कहते हैं।

मैथिस के अनुसार : शिक्षा तकनीकी उन क्रमबद्ध विधियो के विकास को तथा उस व्यावहारिक ज्ञान को कहते हैं, जिनका उपयोग विद्यालय मे शैक्षिक योजना, प्रक्रिया तथा प्रशिक्षण में किया जाता हैं।

रिचमंड के अनुसार : शिक्षा तकनीकी सीखने की उन परिस्थितियों की समुचित व्यवस्था के प्रस्तुत करने से सबंन्धित है जो शिक्षा एवं परीक्षण के लक्ष्यों को ध्यान मे रखकर अनुदेशन को सीखने का उत्तम साधन बनाती है।

हेडिन के अनुसार : शिक्षा तकनीकी, शैक्षिक सिद्धांत एवं व्यवहार की वह शाखा है जो मुख्यतः सूचनाओं के उपयोग एवं योजनाओं से संबधित होती है और जो सीखने की प्रकिया पर नियंत्रण रखती हैं।

NOTES

इन परिभाषाओं का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि शैक्षिक तकनीकी के अंतर्गत अधोलिखित प्रत्यय सम्मिलित किये जाते हैं।

1 शिक्षा तकनीकी मे शिक्षा एवं प्रशिक्षण के व्यावहारिक पक्ष को महत्व दिया जाता है। वैज्ञानिक ज्ञान का शिक्षण तथा प्रशिक्षण में प्रयोग किया जाता है।

2 मनोवैज्ञानिक सिद्धांतो तथा अन्य नियमों का शिक्षण में प्रयोग करना जिससे शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके।

3 शिक्षा तकनीकी मे प्रणाली आयाम को प्रधानता दी जाती है। जिसमें सुनियोजित पद्धतियों तथा प्रविधियों का विकास किया जा सके।

4 अधिगम के स्वरूपो तथा स्रोतों को अधिक महत्व दिया जाता हैं।

5 शिक्षा तकनीकी में शिक्षण, प्रशिक्षण तथा अधिगम को प्रभावशाली बनाने के लिये व्यावहारिक ज्ञान की सहायता से प्रभावशाली पद्धतियों तथा प्रविधियों का विकास किया जाता हैं।

6 कक्षा शिक्षण में सीखने के वैज्ञानिक ज्ञान का प्रयोग शिक्षा तकनीकी कहलाता है, जिससे सीखने की अवस्थाओं में सुधार किया जा सकता है तथा शिक्षण एवं प्रशिक्षण को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है।

शैक्षिक तकनीकी का क्षेत्र :

शैक्षिक तकनीकी की परिभाषाओं तथा विशेषताओं को दृष्टि मे रखकर शैक्षिक तकनीकी के कुछ सामान्य कार्य क्षेत्रों की ओर संकेत किया जा सकता है।

1. **पाठ्यक्रम निर्माण क्षेत्र :** पाठ्यक्रम के निर्माण के लिये वैज्ञानिक तथा तकनीकी ज्ञान का प्रयोग आज के तकनीकी तथा मनोवैज्ञानिक युग में अति आवश्यक हैं। शिक्षा के क्षेत्र मे पाठ्यक्रम का निर्माण बहुत ही कठिन कार्य हो चुका है। शैक्षिक तकनीकी की सहायता से पाठयक्रम का निर्माण सरल किया जा चुका हैं।

2. **शिक्षण अधिगम व्यूह रचनाओं का चयन :** शैंक्षिक तकनीकी का एक महत्वपूर्ण कार्यक्षेत्र शिक्षण अधिगम व्यूह रचनाओं का चयन सरल करना हैं।

3. **दृश्य-श्रृव्य सामग्री का चयन :** शैक्षिक तकनीकी का एक महव्वपूर्ण कार्य क्षेत्र यह है कि इसकी सहायता से शिक्षक दृश्य-श्रृव्य सामग्री का चयन सरलता से कर सकता है।

NOTES

4. **शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण :** शैक्षिक तकनीकी का सॉफ्टवेयर पक्ष शैक्षिक उद्देश्यों के निधरिण में अपना योगदान देता हैं।

5. **शिक्षक प्रशिक्षण का क्षेत्र :** शैक्षिक तकनीकी द्वारा विकसित नई अवधारणाओं का सफल प्रयोग शिक्षण प्रशिक्षण में किया जा सकता हैं। और ऐसा वास्तव मे किया भी जा रहा है, जैसे सूक्ष्म शिक्षण, अनुकरणीय शिक्षण, प्रणाली उपागम, कक्षा अन्तर्क्रिया तथा शिक्षण-प्रतिमान इत्यादि।

7 **पृष्ठ पोषण का क्षेत्र :** शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यांकन के लिये शैक्षिक तकनीकी ने पृष्ठपोषण पर अत्यधिक बल दिया है। इस क्षेत्र में कई प्रयोग भी हुए है।

8 **हार्डवेयर उपकरणों के प्रयोग का क्षेत्र :** शैक्षिक तकनीकी का एक रूप हार्डवेयर यंत्रो का भी है। जैसे शिक्षण मशीने, टेप रिकार्डर, दूरदर्शन, कम्प्यूटर तथा उपग्रह आदि। इनके प्रयोग में कक्षा मे अधिगम को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है।

9 **शिक्षा-तकनीकी के उद्देश्य :** शैक्षिक-तकनीकी के प्रमुख छः उद्देश्य माने जाते है जिनका उल्लेख इस प्रकार है-

1. शिक्षण के उद्देश्यों को प्रतिपादन करना तथा उन्हें व्यावहारिक रूप में लिखना : उद्देश्यो के निर्धारण मे समाज, राष्ट्र तथा भौगोलिक परिस्थितियो को ध्यान मे रखा जाता हैं। इन उद्देश्यों का व्यावहारिक रूप में लिखा जाता है। जिससे शिक्षण तथा परीक्षण मे सुगमता होती है।

2. छात्रों के गुणों का विश्लेषण करना : शिक्षा तकनीकी में छात्रों के गुणों क्षमताओं निष्पत्तियों तथा कौशल का विश्लेषण किया जाता है, क्योंकि अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन के लिये पूर्व व्यवहार की पूर्ति होना आवश्यक समझा जाता है। शिक्षण व्यवहार के संबंध मे सही निर्णय लिया जा सकता है। कि कहाँ तक उद्देश्य की प्राप्ति मे सफलता रही हैं।

NOTES

3. पाठ्यवस्तु की व्यवस्था करना : इसके लिये समुचित शिक्षण आव्यूहो युक्तियों शिक्षण सामग्री तथा पुनबर्लन प्रविधियों का चयन किया जाता है। जिससे निर्धारित उद्देश्यों की प्रप्ति की जा सके ।

4. छात्रों की उपलब्धियों का मूल्यांकन करना : निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है। इसके लिए मानदंड परीक्षा की रचना की जाती है तथा उसके उपयोग से शिक्षण के संबंध मे निर्णय लिया जाता है। मूल्यांकन के आधार पर शिक्षण मे सुधार किया जाता है।

5. पुनवर्लन की प्रविधियों का चयन करना : शिक्षण की प्रकिया को आगे बढ़ाने के लिए समुचित पुनबर्लन की प्रविधियो का चयन करके प्रयोग किया जाता है। शैक्षिक तकनीकी मे इन उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

शैक्षिक तकनीकी के कार्य :

शैक्षिक तकनीकी के प्रमुख कार्य इस प्रकार ।

1. शैक्षिक उद्देश्यों के संदर्भ मे व्यावहारिक उद्देश्यों को सीखने की परिस्थितियों मे परिवर्तित करना।
2. सीखने वालों की विशेषताओं का विश्लेषण करना।
3. पाठ्यवस्तु को व्यवस्थित करना।
4. पाठ्यवस्तु को प्रस्तुत करने के माध्यमो की सरंचना करना ।
5. शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के संदर्भ मे विद्यार्थियों की निष्पत्ति का मूल्याकंन करना ।
6. विद्यार्थियों के व्यवहार मे सुधार करने के लिए पुनबर्लन तथा पृष्ठ पोषण देना।

शैक्षिक तकनीकी का महव्व एवं अवश्यकता :

1. शिक्षण अधिगम प्रकिया की प्रभावपूर्णता में वृद्धि : शैक्षिक तकनीकी शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया को प्रभावपूर्ण बनाकर अपेक्षित सुधार करती है। इसके द्वारा विद्यार्थियो के ज्ञानात्मक, प्रभावात्मक तथा मनोगत्यात्मक पक्षों का श्रेष्ठतम विकास होता है।

2. प्रदा का अधिकतम बिंदु : शैक्षिक तकनीकी की सहायता से अधिगम सुविधाओं मे अधिकतम वृद्धि हुई है। इसका मुख्य कारण यह है कि यह मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, गणित, इंजीनियरिंग तथा अन्य सामाजिक एवं वैज्ञानिक विषयों द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतो का प्रयोग करती है।

NOTES

3. संसाधनो का अधिकतम प्रयोग : शैक्षिक तकनीकी इस बात पर बल देती है कि विद्यमान स्त्रोतों का सीखनें की परिस्थितियों मे अधिक प्रयोग किया जाय, जिससे राष्ट्र के सभी विद्यार्थी उन सीमित स्रोतों से जो शिक्षण कार्य के लिये उपलब्ध है अधिकाधिक लाभन्वित हो सके।

शैक्षिक तकनीकी की विशेषतायें :

1. शैक्षिक तकनीकी वैज्ञनिक बल के प्रयोग पर आधरित है।
2. शैक्षिक तकनीकी के क्षेत्र मे मनोविज्ञान, विज्ञान, तकनीकी, प्रणाली, कला, दृश्य-श्रव्य सामग्री तथा मशीनों का प्रयोग शामिल हैं।
3. शैक्षिक तकनीकी शिक्षण प्रकिया को वस्तुनिष्ठ, सरल तथा स्पष्ट, रुचिकर और वैज्ञानिक बनाने मे सहायक हैं।
4. शैक्षिक तकनीकी मे सीखने के परिणामों की जाँच के लिये मापक यंत्रो की व्यवस्था पर बल दिया गया हैं।
5. शैक्षिक तकनीकी निरंतर विकासशील तकनीकी है।
6. शैक्षिक तकनीकी वातावरण पर नियत्रंण करके सीखने को प्रोत्साहित करती है।

शिक्षा तकनीकी की मुख्य अवधारणा :

1. मनुष्य व्यवहार को समझने के लिये सम्प्रेषण का विषय क्षेत्र जानना अत्यंत आवश्यक है। वास्तव मे मनुष्य सम्प्रेषण विधि की जैवकीय प्रणाली है।
2. मनुष्य जब अपने सम्प्रेषण के विस्तार के लिये अपनी जैवकीय प्रणाली से भिन्न बाहरी अन्य तत्वों या भौतिक वस्तुओं जैसे दूरदर्शन, रेडियो, फिल्म, टेपरेकार्डर, कम्प्यूटर, लेसर किरणों, स्पूतनिक या अन्य युक्तियों आदि का उपयोग करता है। तब इन युक्तियों को सम्प्रेषण माध्यम के रूप के रूप

में परिभाषित किया जाता है। इस प्रकार के माध्यम को प्रसारण माध्यम एवं व्यक्ति का विस्तार के रूप मे जाना जाता है।

NOTES

3. यह अधिक नये इलेक्ट्रानिक बुनियादी शिक्षा समस्याओं के समाधान के लिए उपयोगी सिद्व हुये है। इन नये शिक्षा सम्प्रेषणों के माध्यमों तथा विधियों का नियोजन, कार्यान्वयन विश्लेषण और मूल्याकंन सही ढ़ग से किया जाना है।
4. प्रभावशाली शिक्षकों को प्रशिक्षण संस्थाओ द्वारा तैयार किया जा सकता है शिक्षक का वैज्ञानिक विश्लेषण किया जा सकता है। शिक्षण के स्वरूपों का अधिगम के स्वरूपों से समन्वय स्थापित किया जा सकता है और शिक्षण सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया जा सकता है।

शिक्षा तकनीकी के प्रकार :

आज शिक्षा तकनीकी के अनेक प्रकार हैं। किन्तु शिक्षा की सभी तकनीकियों को दो मुख्य तकनीकों मे विभाजित किया जा सकता है।

हार्डवेयर : इसका अविर्भाव भौतिक विज्ञान या अभियत्रंण तकनीकी से हुआ है। इस तकनीकी को हार्डवेयर आयाम तथा दृश्य-श्रव्य सामग्री कहते हैं। तकनीकी की मशीनों का उपयोग शिक्षण व सीखने की क्रियाओ को प्रभावशाली बनाने के लिए किया जाता है। जिससे शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति अधिकतम रूप मे की जा सकें। शिक्षण मशीन ही एकमात्र यांत्रिक सहायक सामग्री है जिसका अविष्कार शिक्षण के लिए विशिष्ट रूप से किया गया है सामान्यतः शिक्षण, प्रशिक्षण से संबंधित अन्य दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री जैसे रेडियो, टेलीविजन, टेपरेकार्डर, ग्रामोफोन तथा भाषा प्रयोगशाला आदि का आविष्कार और निर्माण शिक्षण मे प्रयोग की अपेक्षा की व्यापार के लिए हुआ है। इस प्रकार शिक्षण की प्रकिया मे मशीनो के प्रयोग से शिक्षा की प्रकिया का यंत्रीकरण हुआ है। जिसे शिक्षा तकनीकी प्रथम या हार्डवेयर आयाम कहते हैं।

इस उपागम के फलस्वरूप पत्राचार पाठ्यक्रम तथा मुक्त विश्वविद्यालय का जन्म हुआ। शोध कार्यो में प्रपत्रों के संकलन विश्लेषीकरण आदि के लिये कम्प्यूटर तथा मशीनो का उपयोग भी इसी उपागम को महत्व देता है।

डेवीन के अनुसार कठोर शिल्प उपागम शिक्षण प्रकिया का क्रमशः मशीनीकरण करके शिक्षा के द्वारा कम खर्च तथा कम समय में अधिक छात्रों को शिक्षित करने का प्रयास चल रहा है। यह उपागम निम्नांकित तीन बातों पर निर्भर करता हैं।

NOTES

1. ज्ञान का संचय करना।
2. ज्ञान का प्रसारण करना।
3. ज्ञान का विस्तार करना।

हार्डवेयर के अतंगर्त चाकबोर्ड, रेडियो, ओवर हेड प्रोजेक्टर, स्लाइड प्रोजेक्टर, बी.सी.आर, टी.वी. तथा मॉनीटर, कम्प्यूटर, कैलकुलेटर आडियो विज्युल रेकार्डर आदि सम्मिलित किया जाता हैं।

सॉफ्टवेयर आयाम :

इस शिक्षा तकनीकी को सॉफ्टवेयर आयाम कहते है। इसमे अभियंत्रण की मशीनों का प्रयोग न करके शिक्षण व सीखने के सिद्धांतो का प्रयोग बालकों में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन लाने के लिये किया जाता है। मशीनों का प्रयोग विशिष्ट रूप से पाठ्य वस्तु के प्रस्तुतीकरण को प्रभावशाली बनाने के लिये होता है। जबकि इस तकनीकी का संबंध शिक्षा के सिद्धान्तों, उद्देश्यों के व्यावहारिक रूप में लिखने, शिक्षण प्रविधियों, अनुदेशन प्रणाली के पुर्नबलन, पृष्ठ पोषण की युक्तियों तथा मूल्यांकन से होता है। इस प्रकार तकनीकी मे अदा प्रक्रिया तथा प्रदा तीनों पक्षों के विकास पर बल दिया जाता है।

सिल्वरमेन **के अनुसार** ''शैक्षिक तकनीकी प्रथम एवं द्वितीय परस्पर संबंधित है और एक दूसरे के पूरक कहे जाते हैं। कठोर शिल्प का तात्पर्य मशीनों से है जबकि कोमल शिल्प सीखने के तथा शिक्षण के सिद्धांतो से संबंधित होते है।''

शिक्षा तकनीकी एवं अनुदेशन तकनीकी :

शिक्षण तकनीकी की भाँति अनुदेशन तकनीकी भी शैक्षिक तकनीकी से पृथक नही है। सामान्यतया शिक्षण तथा अनुदेशन तकनीकी में कोई अतंर नही किया जाता हैं। अनुदेशन तकनीकी दो शब्दों से मिलकर बना है। अनुदेशन तथा

NOTES

तकनीकी अनुदेशन का मतबल है। सूचनाएँ प्रदान करना। अतः अनुदेशन तकनीकी एक ऐसा विषय है जो उपलब्ध साधनों के संदर्भ मे स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति करता है तथा छात्रों मे विशेष व्यवहार परिमार्जन करता है।

अनुदेशन तकनीकी ने शिक्षा क्षेत्र को अधिक्रमित अध्ययन का एक बहुत बड़ा उपहार प्रदान किया है जिसके माध्यम से छात्र अपनी व्यक्तिगत विभिन्नताओं के आधार पर सीखते है। अतः कहा जा सकता है कि अनुदेशन तकनीकी, शैक्षिक तकनीकी की वह शाखा है जो हमे शिक्षण सामग्री तथा अन्य दृश्य-श्रव्य सामग्री की सही उपयोगों के विषय मे सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक दोनो प्रकार की सूचनाएँ प्रदान करती हैं

अनुदेशन तकनीकी की विशेषताए

1. अनुदेशन तकनीकी का प्रमुख कार्य है सूचनाएँ प्रदान करना।
2. अनुदेशन तकनीकी के माध्यम से ज्ञानात्मक उद्देश्यों को अधिक प्रभावशाली विधि से प्राप्त किया जा सकता हैं।
3. छात्रों को इस तकनीकी के प्रयोग से अपनी गति के अनुसार सीखने के अवसर मिलते है।
4. अनुदेशन तकनीकी मे सही उत्तरों का पुनबर्लन होता हैं ।
5. अनुदेशन तकनीकी, मनोविज्ञान, दर्शन तथा विज्ञान के सिद्धान्तो तथा अविष्कारों का उपयोग करती है।
6. इसके माध्यम से अनुदेशन सिद्धान्तो का निर्माण किया जाता है।
7. यह तकनीकी पाठ्यवस्तु का विश्लेषण कर विषय के विभिन्न प्रकरणों मे तारतम्य बनाये रखती है।
8. यह कक्षागत परिस्थितियो में Terminal Behaviour का मूल्यांकन करती हैं।

10 यह शिक्षकों के अभाव मे भी शिक्षण प्रकिया जारी रखती हैं।

11 यह पाठ्यवस्तु तथा इसके तत्वों के ताक्रिक क्रम पर बहुत ध्यान देती है।

12 वह शिक्षण व सीखने की प्रकिया को प्रेरित करने में सहायक है ।

13 शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिये शिक्षण तकनीकी मानवीय तथा अमानवीय दोनों साधनो का उपयोग करती हैं

NOTES

अनुदेशन तकनीकी के सोपान :

1. अनुदेशन सामाग्री का चयन करना।
2. विभिन्न विधियों, प्रविधियों, युक्तियों तथा दृश्य-श्रव्य का प्रयोग करके पाठ को प्रस्तुत करना।
3. मूल्यांकन करना।
4. सुधार के लिए सुझाव प्रदान करना।

अनुदेशन तकनीकी की मान्यताए :

1. अनुदेशन मे कुछ सूचनाएँ दी जानी आवश्यक हैं।
2. किसी भी विषय-वस्तु को छोटे-छोटे तत्वों मे विभाजित किया जा सकता है। और उन तत्वों को स्वतंत्र रूप से प्रस्तुत किया जा सकता हैं।
3. इन तत्वों को इस प्रकार ताक्रिक क्रम में बाँधा जा सकता है, जिससे वांछित सीखने की वाह्य परिस्थितियाँ उत्पन्न हो सके।
4. मानवीय विकास के लिये पृष्ठपोषण का सिद्धांत अत्यंत महत्वपूर्ण है।
5. मानव का प्रत्येक व्यवहार संगठित प्रणाली के अगों के रूप में कार्य करता है।
6. छात्रों को उनकी आवश्यकता और गति के अनुसार पढ़ने का अधिकार हैं।
7. शिक्षण की प्रकिया शिक्षक के बिना भी सम्पादित की जा सकती है।
8. शिक्षण की प्रक्रिया में सीखने के व्यवहारों को नियंत्रित तथा परिमार्जित किया जा सकता है।

NOTES

सम्प्रेषण तकनीकी :

सम्प्रेषण शिक्षा की रीढ़ की हड्डी हैं। बिना सम्प्रेषण के शिक्षा और शिक्षण दोनो की ही कल्पना नही की जा सकती है। सम्प्रेषण शब्द अंग्रेजी के कम्यूनीकेशन का हिन्दी पर्यायवाची शब्द हैं। इस शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द कम्यूनीस से मानी जाती है। कम्यूनीस शब्द का अभिप्राय है कॉमन या सामान्य। अतः कहा जा सकता है कि सम्प्रेषण एक ऐसी प्रकिया है, जिसमें व्यक्ति परस्पर सामान्य अवबोध के माध्यम से आदान-प्रदान करने का प्रयास कहते है।

सम्प्रेषण का अर्थ है परस्पर सूचनाओं तथा विचारों का आदान-प्रदान करना। शिक्षा और शिक्षण बिना सूचनाओं तथा विचारों के संभव ही नही है। शिक्षक होने के नाते आप अपने प्रधानाचार्य से अथवा छात्रो से कुछ कहते है। या छात्र आपको कुछ बताते है। इसका तात्पर्य है कि सम्प्रेषण की प्रक्रिया चल रही है।

''सम्प्रेषण एक ऐसी प्रकिया है जिसमे व्यक्ति अपने ज्ञान हाव-भाव, मुख्य मुद्रा तथा विचारों आदि का परस्पर आदान-प्रदान करते हैं तथा इस प्रकार से प्राप्त विचारों अथवा संदेशो को समान तथा सही अर्थो मे समझने और प्रेषण करने मे उपयोग करते हैं।

परिभाषाएँ :

रेन्डरसन के अनुसार : ''सम्प्रेषण एक गत्यात्मक प्रक्रिया है, जिसमें व्यक्ति चेतनतया अथवा अचेतनतया, दूसरों के संज्ञानात्मक ढाँचे को सांकेतिक रूप में, उपकरणों या साधनों द्वारा प्रभावित करता है।''

लूगीस एवं वीगल के अनुसार : ''सम्प्रेषण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सामाजिक व्यवस्था के अंर्तगत सूचनाओं निर्देशो तथा निर्णयों द्वारा लोगों के विचारों, मतो तथा अभिवृत्तियो में परिवर्तन लाया जाता हैं।''

एडगर डेले के अनुसार : सम्प्रेषण विचार विनिमय के मूड में विचारों तथा भावनाओं को परस्पर जानने तथा समझने की प्रकिया है।

NOTES

सम्प्रेषण की प्रकृति एवं विशेषतायें :

उपर्युक्त सभी परिभाषाओं के आधार पर निम्नांकित प्रकार से सम्प्रेषण प्रक्रिया की प्रकृति एवं विशेषताओं का दिग्दर्शन किया जा सकता था।

1. सम्प्रेषण एक पारस्परिक संबंध स्थापित करने की एक प्रकिया है।
2. इसमें विचार विमर्श तथा विचार विनिमय पर विशेष ध्यान दिया जाता है।
3. यह द्विवाही प्रक्रिया है अर्थात् इसमे दो पक्ष होते हैं। एक संदेश देने वाला तथा दूसरा संदेश ग्रहण करने वाला।
4. सम्प्रेषण प्रक्रिया एक उद्देश्ययुक्त प्रक्रिया होती है।
5. सम्प्रेषण में मनोवैज्ञानिक-सामाजिक पक्ष समावेशित होते है।
6. प्रभावशाली सम्प्रेषण उत्तम शिक्षण के लिये बुनियादी तत्व है।
7. सम्प्रेषण मानवीय तथा सामाजिक वातावरण को बनायें रखने का कार्य करता है।
8. सम्प्रेषण प्रक्रिया मे प्रत्यक्षीकरण समावेशित होता है।
9. सम्प्रेषण एवं सूचनाओं में अतंर है। सूचनाओं मे तर्क औपचारिकता तथा Impersonality की विशेषतायें होती है; जैसे-पुस्तक एक सूचना है या टी.वी. पर प्रोग्राम सूचनाओं से भरे रहते है। लेकिन जब तक पुस्तक पढी न जाये या टी.वी. खोला न जाये तब तक सम्प्रेषण संभव नही है।
10. सम्प्रेषण मे सामान्यतः व्यक्ति उन्ही चीजों/विचारों का प्रत्यक्षीकरण करते है, जिनकी उन्हें अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताओं, मूल्यों, प्रेरकों परिस्थितियों या पृष्ठभूमि के अनुसार चाह/आकंक्षा या प्रत्याशा होती है।
11. सम्प्रेषण के चार मुख्य कार्य है।
    (क) सूचना प्रदान करना।
    (ख) निर्देश या आदेश/संदेश प्रेषित करना।
    (ग) परस्पर विश्वास जागृत करना।
    (घ) समन्वय स्थापित करना।

12. सम्प्रेषण की प्रक्रिया मे परस्पर अन्तःक्रिया तथा पृष्ठपोषण होना आवश्यक होता है।

NOTES

13. सम्प्रेषण सदैव गत्यात्मक प्रक्रिया होती है।

सम्प्रेषण की प्रक्रिया :

सम्प्रेषण एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा मानवीय संबंध स्थापित होते हैं। दृढ़ होते है तथा विकसित होते हैं। सम्प्रेषण की प्रक्रिया, सामाजिक संरचना मे ऐसे गुंथे हुये है कि बिना सम्प्रेषण के सामाजिक जीवन की कल्पना करना ही मुश्किल होता है।

सम्प्रेषण की प्रक्रिया को सरल मॉडल के रूप में नीचे प्रदर्शित किया जा रहा है।

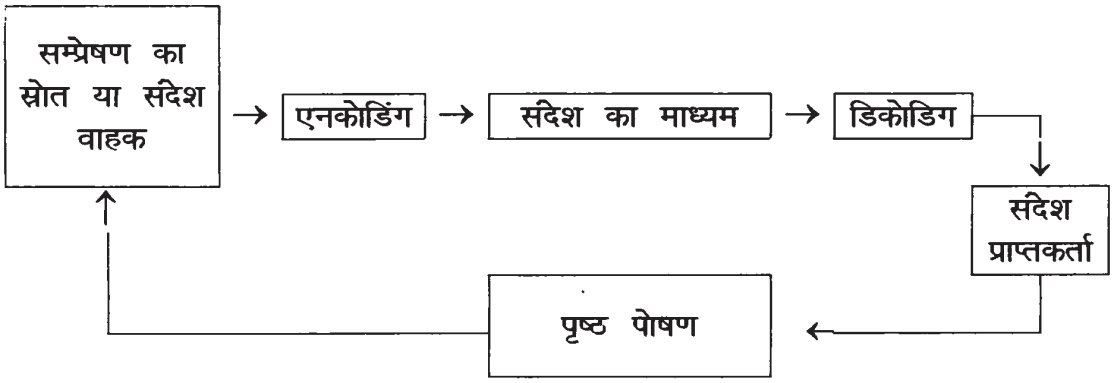

इस मॉडल के अनुसार जो व्यक्ति संदेश भेजता है वह संदेश बनाता है उसे लिखता है फिर किसी न किसी माध्यम के द्वारा संदेश प्रेषित किया जाता है। प्रेषित संदेश जहाँ पहुचँता है वहाँ उसे पढ़कर Decode करते हैं। और संदेश जिसके लिये है उस तक पहुँचाते है। यह व्यक्ति संदेश प्राप्ति की सूचना देता है।

सम्प्रेषण प्रक्रिया के तत्व :

1 सम्प्रेषण सदंर्भ :

(क) भौतिक सदंर्भ-स्कूल शिक्षण कक्ष आदि ।

(ख) सामाजिक सदंर्भ-कक्षा या विद्यालय का वातावरण

(ग) मनोवैज्ञानिक सदंर्भ-औपचारिकता/अनौपचारिता

(घ) समय संदर्भ-दिन का समय तथा समय की अवधि

2. संदेश का स्त्रोत : व्यक्ति/शिक्षण/घटना जो शाब्दिक या अशाब्दिक संकेत प्रदान करते है, संदेश स्त्रोत कहलाते है। जब यह स्त्रोत व्यक्ति होता है तो इसे संदेश स्त्रोत से ही प्रारंभ होती है जो संदेश की विषय वस्तु निर्धारित करता है।

NOTES

3. संदेश : संदेश एक उद्दीपक होता है जो संदेश भेजने वाला प्रेषित करता है। संदेश मौखिक या लिखित संकेतों के रूप में तथा व्यक्ति की मुख्य मुद्रा या हावभाव के रूप में हो सकता है।

4. सम्प्रेषण का माध्यम : सम्प्रेषण के माध्यम का अर्थ है वह साधन जिसके द्वारा कोई संदेश, संदेश-स्त्रोत से संदेश प्राप्त करने वाले तक पहुँचता है। माध्यम प्रत्यक्षीकरण की संवेदनायें होती है जो दिखने वाली, सुनने वाली, स्पर्श करने वाली, स्वाद बताने वाली तथा गंध वाली हो सकती है। सम्प्रेषण का माध्यम वह पथ है। जिसमें संदेश भौतिक रूप से प्रेषित किया जाता हैं। तार, रेडियो, स्टूडियो, समाचारपत्र, पत्रिकायें, पुस्तकें, पत्र, सम्प्रेषण के माध्यमों के कुछ उदाहरण है।

5. संकेत या प्रतीक : ये प्रतीक या संकेत वे है जो किसी अन्य चीज का प्रतिनिधित्व करते है। ये संकेत शाब्दिक अथवा अशाब्दिक भी हो सकते है। शब्द, स्वमं मे संकेत या प्रतीक होते है।

6. एनकोडिगं : एनकोडिंग वह प्रक्रिया है जिसमें किसी विचार या भावना की अभिव्यक्ति के लिए संकेतो या प्रतीकों का प्रयोग किया जाता है।

7. डीकोंडिग : यह वह प्रक्रिया होती है जिसमें संदेश प्राप्त करने वाला प्राप्त व्यक्ति संदेश स्त्रोत से प्राप्त संकेतो या प्रतीकों का कूटानुवाद कर संदेश ग्रहण करता है।

8. पृष्ठपोषण : यह वह प्रत्युत्तर होता है जो संदेश प्राप्त करने वाला व्यक्ति, संदेश प्राप्त करने के पश्चात् संदेश देने वाले के पास प्रेषित करता है।

9. संदेश ग्रहणकर्ता : संदेश ग्रहणकर्ता वह व्यक्ति है जो सम्प्रेषण की प्रक्रिया में संदेश प्राप्त करता है। जैसे-श्रोता, छात्र, दर्शन आदि ।

सम्प्रेषण के प्रकार :

NOTES

1. शाब्दिक सम्प्रेषण
2. अशाब्दिक सम्प्रेषण

1. शाब्दिक सम्प्रेषण :

शाब्दिक सम्प्रेषण में सदैव भाषा का प्रयोग किया जाता है। यह सम्प्रेषण मौखिक रूप में वाणी द्वारा तथा लिखित रूप में शब्दों या संकेतो के द्वारा विचार तथा भावनाओं को दूसरो के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए प्रयोग किया जाता है।

(क) मौखिक सम्प्रेषण (ख) लिखित सम्प्रेषण

(क) मौखिक सम्प्रेषण : मौखिक सम्प्रेषण में मौखिक रूप में वाणी द्वारा तथ्यों एवं सूचनाओं का आदान-प्रदान किया जाता है। इस विधि में संदेश देने वाला तथा संदेश ग्रहण करने वाला दोनों ही परस्पर आमने-सामने रहते है।

(ख) लिखित सम्प्रेषण : इसमें संदेश देने वाले तथा संदेश पाने वाले व्यक्तियों का आमने-सामने होना आवश्यक नही है।

2. अशाब्दिक सम्प्रेषण :

(क) वाणी सम्प्रेषण : वाणी सम्प्रेषण मे विचारों तथा भावनाओं की अभिव्यक्ति व्यक्तिगत रूप से था छोटे-छोटे समूहो मे आमने-सामने रहकर वाणी द्वारा की जाती है। उदाहरण के लिये वार्ता के मध्य Yes, Yes हाँ-हाँ कहना या बीच-बीच में हूँ-हूँ अथवा हाँ, हूँ करते चले जाना ।

(ख) चक्षु सम्पर्क एवं मुख्य मुद्रायें : व्यक्तिगत सम्प्रेषण में चक्षु सम्पर्क तथा मुख्य मुद्राओं का प्रदर्शन अत्यंत प्रभावशाली माना जाता है। कक्षा में चक्षु सम्पर्क के द्वारा शिक्षक अपने छात्रों की मनः स्थिति का सही अदांजा लगाने मे सफल होते है।

(ग) स्पर्श सम्पर्क : स्पर्श सम्पर्क में स्पर्श का ही सम्प्रेषण का प्रमुख माध्यम बनाया जाता है। स्पर्श के माध्यम से व्यक्ति अपनी भावनाओं एवं विचारों की अभिव्यक्ति करने में समर्थ होते है। हाथ मिलाते ही पता चल जाता हैं। कि यह दोस्ती का हाथ है या दुश्मनी की।

सम्प्रेषण में आने वाली प्रमुख बाधायें :

NOTES

कई बार सम्प्रेषण प्रक्रिया में बाधाये आ जाती हैं। फलस्वरूप प्रेषित संदेश या तो गलत हो जाता है अथवा अपूर्ण रूप से ग्रहण किया जाता है।

1. शोर : शोर भी सम्प्रेषण में एक बही बाधा है। शोर में कई बार संदेश सही रूप मे सुनायी नही दे पाता। अतः गलत तरह से संदेश ग्रहण कर लिया जाता है।

2. भाषा : एक शब्द में कई बार अनेक अर्थ होते हैं। अतः किस शब्द का उपयोग कहाँ तथा किसलिये किया गया है यह संदर्भ स्पष्ट होना चाहिए अन्यथा संदेश ग्रहण करने में अनेक भ्रातियाँ संभव है।

3. पूर्व अनुभव : हम अपने पूर्व अनुभवों के आधार पर ही किसी उत्प्रेरक या उद्दीपक को समझने का प्रयास करते है ये पूर्व अनुभव हमारी पृष्ठभूमि से संबंधित होते है।

4. संवेग तथा भावनाये : अलग-अलग शब्द सुनकर अलग-अलग तरह की प्रतिक्रियायें मन में आती है। ये प्रतिक्रियायें हमारे संवेगों तथा भावनाओं पर निर्भर करती हैं। अनुकूल शब्द, अच्छी प्रतिक्रियायें तथा संवेगों व भावनाओं के प्रतिकूल शब्द गलत प्रतिक्रियायें देते हैं।

Mass Media Approach in Education Technology :

अधिगम की परिस्थितियों को उत्पन्न करने तथा अधिगम के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए सम्प्रेषण शिक्षण-युक्तियाँ तथा आव्यूह का चयन किया जाता है। इनको प्रभावशाली बनाने में दृश्य-श्रृव्य सहायक सामग्री के प्रयोग से अधिगम की परिस्थितियों को अधिक प्रभावशाली रूप में उत्पन्न किया जा सकता है और उद्देश्यों की अधिकतम प्राप्ति की जा सकती है।

दृश्य-श्रृव्य सामग्री : दृश्य-श्रृव्य सामग्री का अर्थ शिक्षण के उन साधनों से है जिनके प्रयोग से बालको की श्रृव्य तथा दृश्य की ज्ञानेन्द्रियाँ सक्रिया हो जाती है। और वे पाठ के सूक्ष्म से सूक्ष्म तथा कठिन से कठिन भावों को सरलतापूर्वक समझ जाते है।

कार्य :

NOTES

1. प्रेरणा : श्रव्य-दृश्य साधन बालकों का ध्यान आकर्षित करके ज्ञान को स्थूल रूप में प्रस्तुत करते है इससे बालकों को सिखाने कि क्रिया में प्रेरणा एवं उत्लुकता मिलती है।

2. क्रिया का सिद्धांत : छात्रों को इसमें विभिन्न तरह की क्रियाएँ करने के अवसर मिलते है। वे उसमे बोलते-चालते है। प्रश्न पूछते है तथा वाद-विवाद करते है, जिनके परिणामस्वरूप उनकी पाठ में रूचि बनी रहती है।

3. स्पष्टीकरण : श्रव्य-दृश्य सामग्री के प्रयोग से बालकों को कठिन से कठिन पाठ्य सामग्री का स्पष्टीकरण हो जाता है इसका एकमात्र कारण यह है कि बालक जो कुछ सुनते है उसी को आँख से भी देख सकते है।

4. सार्थक अनुभव : श्रव्य-दृश्य सामग्री द्वारा बालको को पाठ स्थूल रूप से पढ़ाया जाता है। प्रत्येक बालक वस्तु को देखकर छूकर तथा पूछकर हर प्रकार से ठीक-ठीक समझने का प्रयास करता है। इससे पाठ सरल, रोचक तथा मनोरंजन बन जाता है। एवं सभी बालक ज्ञान को प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण कर लेते है।

5. रटने को कम करना : दृश्य-श्रव्य सामग्री के प्रयोग से बालक पाठ के विकास मे रूचि लेते है तथा ज्ञान को स्वयं किया करके ग्रहण करते है। इससे सीखा हुआ ज्ञान निश्चित और स्थायी बन जाता है और उन्हें किसी चीज को रटने की आवश्यकता नही पड़ती।

6. शब्दावली मे वृद्धि : श्रव्य-दृश्य सामग्री के द्वारा बालकों की शब्दावली में वृद्धि होती है। इसका कारण यह है कि वे रेडियों, टेलीफोन तथा चलचित्र का प्रयोग करते समय नये-नये शब्द सुनते है तथा ग्रहण करते हैं।

7. शिक्षण में कुशलता : श्रव्य-दृश्य सामग्री के प्रयोग करने से शिक्षण में कुशलता आती है साथ ही शिक्षण और अधिक प्रभावशाली बन जाता है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि श्रव्य-दृश्य सामग्री के अनेक कार्य है तथा इससे बालकों की शिक्षा में महत्वपूर्ण स्थान हैं।

वर्गीकरण :

अ. श्रव्य सहायक सामग्री : रेड़ियो ग्रामोफून, टेपरेकार्डर, भाषा प्रयोगशाला आदि।

ब. दृश्य सहायक सामग्री : वस्तुएँ, मानचित्र, मॉडल, चित्र, आकृतियाँ, ग्राफ, रेखाचित्र संग्रहालय।

स. दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री के प्रकार : दूरदर्शन, चलचित्र, नाटक, अभिनय, वीडियो कैसेट आदि।

NOTES

अ. श्रृव्य सहायक सामग्री :

श्रव्य सामग्री का तात्पर्य उन साधनों से हैं। जिनमें केवल श्रव्य इन्द्रियों का प्रयोग होता है। अर्थात् जिनसे ज्ञान मुख्यतः कान द्वारा प्राप्त होता है।

1. रेडियो : रेडियो द्वारा बालकों को संसार के प्रत्येक राष्ट्र तथा उसमें निवास करने वाले सभी लोगों की क्रियाओं मे रूचि उत्पन्न हो जाती है। इससे उनका सामान्य ज्ञान विस्तृत होता है। आधुनिक शिक्षा के क्षेत्र में रेडियो का विशेष महत्व है। इसलिये लगभग सभी स्कूलों के पास अपने-अपने निजी रेडियो सेट है।

2. ग्रामोफोन तथा लिंग्वाफोन : ग्रामोफोन तथा लिग्वांफून भी रेडियो की भाँति शिक्षण के महत्वपूर्ण उपकरण है। ग्रामोफोन द्वारा बालकों को भाषण तथा गाने की शिक्षा दी जाती है। तथा लिंग्वाफोन द्वारा बालकों के उच्चारण शुद्ध कराके भाषा भी शिक्षा दी जाती है।

3. टेपरेकार्डर : शैक्षिक उपकरण के रूप में टेप रेकार्डर एक नया उपकरण है। इसके अंदर कोई भी व्यक्ति अपनी ध्वनि को किसी भी समय भर कर पुनः सुन सकता है।

4. भाषा प्रयोगशाला : भाषा प्रयोगशाला शिक्षण के क्षेत्र में अन्य दृश्य श्रव्य उपकरणों की भाँति यह सहायक मात्र है, न कि अध्यापक/शिक्षा का प्रतिस्थापन/भाषा प्रयोगशाला एक विशेष कक्ष होता है। जो विविध दृश्य-श्रव्य तथा दृश्य-श्रव्य उपकरणों से युक्त होता है। सामान्यतः एक भाषा प्रयोगशाला चार-छः आठ-बत्तीस टेप रेकार्डरो का एक क्रमिक व्यवस्थित संयोजन होता है, जिसके माध्यम से शिक्षार्थी/अध्येता भाषा-अध्ययन के लिए विविध प्रकार के अभ्यास करते हुए भाषा सीखते है।

दृश्य सहायक सामग्री :

NOTES

दृश्य सामग्री का तात्पर्य उन साधनों से है जिनमें केवल दृश्य इन्द्रियों का प्रयोग होता है।

1. वास्तविक पदार्थ : वास्तविक पदार्थों का तात्पर्य मूल वस्तुओं से है। वास्तविक पदार्थ बालकों की इन्द्रियों को प्रेरणा देते है। तथा उन्हें निरीक्षण व परीक्षण के अवसर प्रदान करके उनकी अवलोकन शक्ति का विकास करते है।

2. प्रतिमान : नमूने वास्तविक पदार्थों या मूल वस्तुओं के छोटे रूप होते है। इनका प्रयोग उस समय किया जाता है। जब वास्तविक पदार्थ या तो उपलब्ध न हो या इतने बडे हो कि उन्हें कक्षा मे दिखाना ही संभव न हो। उदाहरण के लिये हाथी, घोडे, रेल का इंजन तथा जहाज आदि इतने बड़े होते है कि उन्हे कक्षा मे उपस्थित नही किया जा सकता। अतः बालको को उक्त सभी का ज्ञान देने के लिये उनके नमूने दिखाये जाते है।

3. चित्र : जब वास्तविक पदार्थों तथा नमूनों का मिलना कठिन हो जाता है तो ऐसी स्थिति मे चित्रों का प्रयोग किया जाता हैं। स्मरण रहें कि चित्रों से वास्तविक पदार्थों के स्पर्श के संबंध मे कोई ज्ञान प्राप्त नही होता फिर भी इनका शिक्षण में विशेष लाभ होता है।

4. मानचित्र : मानचित्र का प्रयोग प्रमुख ऐतिहासिक घटनाओं तथा भौगोलिक तथ्यों अथवा स्थानों के अध्ययन करने के लिये परम आवश्यक है। यूँ तो मानचित्र बने बनाये ही बाजार मे मिल जाते है। पर अच्छा यही है कि शिक्षक मानचित्रों को स्वयं ही बनाये और उनमें केवल उन्ही बातों को सुंदर ढंग से अंकित करे जिनकी नितांत आवश्यकता हो।

5. रेखाचित्र तथा आकृतियाँ : कभी-कभी ऐसा भी होता है कि शिक्षक को वास्तविक पदार्थ नमूने तथा चित्र एवं मानचित्र उपलब्ध नही हो पाते। ऐसी स्थिति में शिक्षक को भाव प्रकाशन के लिये श्यामपट्ट पर रंगीन चाक से रेखाचित्र तथा खाके खींचने चाहिये। स्मरण रहे कि रेखाचित्र तथा खाकों का प्रयोग भाषा, भूगोल, इतिहास तथा गणित एवं विज्ञान आदि सभी विषयों मे किया जा सकता हैं।

6. ग्राफ : ग्राफ का अपना निजी महत्व होता है। ग्राफ के प्रयोग से बालकों को भूगोल, इतिहास, गठित तथा विज्ञान आदि अनेक विषयों का ज्ञान सरलतापूर्वक दिया जा सकता है।

NOTES

7. चार्ट : चार्टो के प्रयोग से शिक्षक को शिक्षण का उद्देश्य प्राप्त करने में बड़ी सहायता मिलती हैं। ध्यान देने की बात है कि चार्टों का प्रयोग भूगोलद्व इतिहास, अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र तथा गणित एवं विज्ञान आदि सभी विषयों मे सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

8. श्यामपट्ट : कक्षा अध्यापन में दृश्य साधन के रूप में श्यामपट्ट की सर्वाधिक प्रयोग में आता है। श्यामपट्ट का उचित, सही एवं विधि पूर्वक उपयोग पाठ को प्रभावशाली बनाने में बहुत सहायक होता है। अध्यापक को श्यामपट्ट कार्य में पारगंत होना चाहिये।

संग्रहालय :

संग्रहालय भी शिक्षा का एक महत्वपूर्व उपकरण है। इसमें सभी वस्तुओं को एकत्रिक करके रखा जाता है। इन वस्तुओं की सहायता से पाठ रोचक तथा सजीव बन जाता है। एवं बालक उसे सरलतापूर्वक समझ लेते है। अतः शिक्षक को संग्रहालय का सद्उपयोग अवश्य करना चाहिये।

दृश्य-श्रव्य सामग्री

अर्थ : दृश्य-श्रव्य सामग्री का तात्पर्य उन साधनो से है जिनमें श्रव्य-दृश्य दोनों इन्द्रियों का प्रयोग होता है। अर्थात् जिनमें ज्ञान को श्रृव्य तथा दृश्य दोनो इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त होता है।

1. चलचित्र या सिनेमा : चलचित्र या सिनेमा मूक चित्र का दूसरा रूप है। इसमें मूक-चित्र की भांति क्रियायें भी दिखायी जाती है। साथ ही ध्वनि की व्यवस्था भी होती है। इस प्रकार चल-चित्र या सिनेमा बीसवीं शताब्दी की शिक्षा का सस्ता, सुलभ एवं यंत्रीकृत महत्वपूर्ण साधन है।

2. समाचार सम्बंधी फिल्म : समाचार सम्बधी फिल्मों का तात्पर्य उन फिल्मों से है जिनके द्वारा बालकों को सामाजिक विषयों की शिक्षा दी जाती है। ऐसी फिल्मों द्वारा

NOTES

जनता को देश के राजनैतिक, अर्थिक तथा सामाजिक जीवन से संबंधित परिस्थितयों, घटनाओं तथा योजनाओं के संबंध मे समाचार की दिये जाते हैं।

3 दूरदर्शन : टेलीविजन भी रेडियो की भाँति बीसवीं शताब्दी की वैज्ञानिक उपलब्धियों में शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उपकरण है। रेडियो द्वारा तो हम उच्च कोटि के शिक्षा शास्त्रियों तथा कलाकारों की केवल वाणी ही सुन सकते है परंतु टेलीविजन पर उन सबकी शक्लो तथा उन्हें विभिन्न कार्यक्रमों मे भाग लेते हुये भी देख सकते है।

4 शैक्षिक भ्रमण : भ्रमण कक्षा के बाहर स्थित किसी स्थान को योजनाबद्ध निरीक्षण है। भ्रमण तभी आयोजित किया जाता है। जब कक्षा की चार दिवारी में विषय के किसी पक्ष को भली-भाँति स्पष्ट करना संभव न हो। भ्रमण द्वारा शिक्षार्थियों मे निरीक्षण करने तथा कल्पना करने की योग्यताओं का विकास किया जाता हैं।

अनुदेशन प्रारूप :

शिक्षण प्रक्रिया में अनुदेशन प्रारूप का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। अनुदेशन दो शब्दो से मिलकर बना हैं।

1. अनुदेशन 2. प्रारूप

अनुदेशन का अर्थ ही सूचनाएँ देना तथा प्रारूप का अभिप्राय वैज्ञानिक विधियों से जाँच किये गये सिद्धांतो से है। सारा शोध-संसार कुछ धारणाओं के आधार पर कार्य करता है। और उनका मूल्यांकन कर निश्चित निष्कर्षों पर पहुँचने से मदद देता है। दूसरे शब्दों में प्रत्येक शोध का अपना प्रारूप होता हैं। इसी प्रकार शिक्षण के क्षेत्र मे जिन प्रारूपों पर कार्य किया जाता है। उन्हें अनुदेशन प्रारूप कहते

मैरिल के अनुसार : छात्रों के व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिये सीखने के सिद्धांतो के साथ-साथ शिक्षण की परिस्थितियों, कार्यो, विधियों और उपागमों के सम्मिलित रूप को अनुदेशन प्रारूप कहा जाता है।

अनविन के अनुसार : अनुदेशन प्रारूप आधुनिक कौशल, प्रविधियों तथा युक्तियों का शिक्षा और प्रशिक्षण में प्रयोग है। अनुदेशन प्रारूप, इन कौशलों, प्रविधियों तथा युक्तियों आदि के माध्यम से शैक्षिक वातावरण को नियंत्रित करते

है और कक्षा मे सीखनें तथा सीखाने के कार्य को सरल, सुगम तथा उपादेय बनाने में सहायता करता है।

NOTES

अनुदेशन प्रारूप की मान्यताएँ :

1. अनुदेशन प्रारूप, शिक्षण सिद्धांतो पर आधारित होता है।
2. यह परिकल्पनात्मक तथ्यों को सहज रूप में परीक्षण के लिये स्वीकार करता है।
3. अनुदेशन प्रारूप, भौतिक, संगणक तथा गणितीय प्रारूपों की सहायता लेता है।
4. अनुदेशन प्रारूप मे अधिगम के मापन के लिये प्रतिमानों का होना आवश्यक है। व्यवहार को उसके परिणामों के सदंर्भ में नियंत्रित किया जाता है।
5. नियम, सिद्धांत तथा रचना ये सभी अनुदेशन प्रारूप के लिये आवश्यक है। व्यवहार को उसके परिणामों के सदंर्भ में नियंत्रित किया जाता है।
6. शिक्षण कला एवं विज्ञान दोनों है।
7. शिक्षण को प्रभावशाली प्रशिक्षण के माध्यम से बनाया जा सकता है।

अनुदेशन प्रारूप के प्रकार :

शिक्षा की समस्याओं को सुलझाने के लिए अनेक उपागम शिक्षा के क्षेत्र में आये हैं। इन नवीन उपागमों के क्षेत्र में अनुदेशन प्रारूप के अग्रांकित तीन उपागत सर्वाधिक लोकप्रिय हैं। ये चार्ट द्वारा प्रदर्शित किये गये है।

1. प्रशिक्षण मनोविज्ञान प्रारूप
2. सम्प्रेषण नियंत्रण प्रारूप
3. प्रणाली उपागम ये तीनों प्रारूप एक दूसरे के सहमागी या पूरक प्रारूप है। ये शैक्षिक तकनीकी के अदा प्रदा तथा प्रक्रिया पक्षों से घनिष्ठ संबंध रखते है।

प्रशिक्षण मनोविज्ञान प्रारूप :

प्रशिक्षण मनोविज्ञान प्रारूप, कार्य-विश्लेषण तथा सम्बंधित प्रशिक्षण अवयवों पर विशेष ध्यान देता है। ये शैक्षिक तकनीकी के अदा पक्ष से सबंधित है। इसकी उत्पत्ति सैनिक आवश्यकताओं की अनुक्रिया के फलस्वरूप हुई थी ।

NOTES

इस प्रारूप मे निम्नंकित सोपान है।

1 कार्य तत्वो को पहचानना।

2 उनकी प्राप्ति के सम्बंध में विचार करना।

3 सीखने की पूर्ण परिस्थिति को एक व्यवस्थित क्रम प्रदान करना ।

उपयोगिता :

1. शिक्षक प्रशिक्षण प्रतिमान विकसित करने मे यह अत्यंत उपयोगी है।
2. अनुदेशन विकसित में सहायक है।
3. शिक्षक को कार्य-विश्लेषण कर तत्वों मे विभाजित कर उन्हें उचित क्रम प्रदान करती है।
4. ब्रांचिग अभिक्रमित अध्ययन इसी के सिद्धांतो का परिणाम है।
5. वर्तमान प्रशिक्षण कार्यक्रमों मे सुधार लाने में प्रयत्नशील हैं।
6. शिक्षण तथा प्रशिक्षण को यह प्रभावशाली बनाती हैं।

सम्प्रेषण नियत्रंण प्रारूप

सम्प्रेषण नियत्रंण शब्द Cybernatics का हिंदी पर्याय है। Cybernetics ग्रीक भाषा के Kybernets से निकला है जिसका अर्थ है पायलर या प्रशासक। अतः कहा जा सकता है कि सम्प्रेषण नियंत्रण, प्रशासन करने की एक व्यवस्था था प्रारूप है।

आधार भूत तत्व :

1. अदा या लागत : यह सम्पूर्ण प्रक्रिया में प्रथम आवश्यक अदा या शिक्षण सामग्री का प्रस्तुतीकरण है। उदाहरणार्थ पुस्तकालय अदा के अतंगर्त लिखित-मुद्रित सामग्री, दृश्य-श्रव्य सामग्री, डायग्राम तथा चार्ट आदि आते हैं।

2. प्रदा : अनुदेशन व्यवस्था में छात्रों के सामने प्रदर्शन करना एक प्रदा कहलाती है। यह इकाई क्रम की प्रकिया का परिणाम है, जो लिखित भी हो सकती है और अलिखित भी।

3. यंत्र/ससांधक : इसके माध्यम से सूचनाओं मे अथवा सामग्री मे संशोधन तथा परिमार्जन किया जाता है।

उपयोगिता :

1. यह व्यवस्था शिक्षण प्रकिया को अधिक व्यवस्थित तथा वैज्ञानिक बनाती है।
2. लीनियर अभिक्रमिक अध्ययन के सिद्धांतों को स्पष्ट करती है।
3. यह शिक्षण का सर्वभौमिक रूप प्रदर्शित करती है।
4. शिक्षण प्रक्रिया का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत कर इसे उन्नतशील बानने का प्रयास करती है।
5. शिक्षण को शिक्षण तंत्र समझने में सहायता देती है।
6. कक्षा अनुदेशन में उपयोगी हैं।
7. नवीन शिक्षण के प्रतिमान तैयार करने में सहायक हैं।

NOTES

प्रणाली उपागम :

प्रणाली उपागम का द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान जन्म् हुआ था। तब से अब तक इसने उद्योग, सरकार सेना तथा व्यापार के क्षेत्र में प्रबंध संबंधी निर्णयों को विशेष रूप से प्रभावित किया है। System था प्रणाली का अभिप्राय एक निश्चित संख्या से है।

सोपान :

1. आवश्यकता की परिभाषा करना।
2. उद्देश्यों का निर्धारण करना।
3. सीमाओं का विवरण।
4. समस्या समाधान के विकल्पों की खोज।
5. सही विकल्प का चयन।
6. कार्यान्वयन।
7. मूल्यांकन।
8. परिमार्जन एवं संशोधन।

उपयोगिता :

1. शैक्षिक प्रबध के क्षेत्र मे यह वैज्ञानिक विश्लेषणात्मक उपागम प्रस्तुत करती हैं। जिससे कि शैक्षिक प्रशासन की जटिल समस्याएँ सुलझाई जा सकती है।

NOTES

2. शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रमों को प्रणाली उपागम के माध्यम से और अधिक उन्नत एवं उपयोगी बनाया जा सकता है।
3. यह शैक्षिक समस्याओं के समग्र रूप से अध्ययन करने में उपादेय सिद्व हुई है।
4. शैक्षिक प्रणाली मे उचित वस्तुनिष्ठ तथा सही प्रकार के परिवर्तन लाने मे यह उपागम श्रेष्ठ सिद्व हुआ है।
5. यह शैक्षिक सामग्री की तैयारी, शैक्षित वातावरण के नियंत्रण तथा प्रबंध करने में काफी सहायक सिद्व हुआ है।
6. प्रणाली उपागम छात्रों को उद्देश्यों से परिचित कराता है। उन्हे सही अधिगम अनुभव देने मे सहायता करता है। शिक्षण के समय प्राप्त प्रत्येक स्त्रोत का पूरा उपयोग करता है।

कार्य विश्लेषण :

अर्थ : कार्य-विश्लेषण दो शब्दो से मिलकर बना हैं। कार्य+विश्लेषण। कार्य किसी भी पाठ्य-वस्तु के शिक्षण मे उपलब्धि की इकाई है जो कि सामूहिक रूप से क्रियान्वयन कहलाता है। विश्लेषण का अर्थ है छोटे-छोटे भागों में बाटँना। अतः कार्य विश्लेषण में छात्रों की पाठ्य सामग्री से संबंध रखने वाली क्रियाओं का विश्लेषण किया जाता है। कार्य विश्लेषण के माध्यम से एक शिक्षक सीखने के उद्देश्यों, शिक्षण नीतियों तथा शिक्षण-युक्तियों के संबंध मे सही निर्णय लेने में समर्थ होता है।

कार्य-विश्लेषण के अन्तर्गत विश्लेषण के साथ-साथ संश्लेषण की क्रिया भी सम्मिलित रहती है।

कार्य-विश्लेषण में कार्य के विश्लेषण करने के पश्चात् शिक्षक संश्लेषण के द्वारा निश्चित निष्कर्ष पर पहुँच कर सही निर्णय ले लेता है। कि उसे क्या पढ़ाना है। कितनी गहराई तक पढ़ाना है। किन युक्तियों का प्रयोग करना है।

कार्य विश्लेषण का सम्प्रत्यय प्रशिक्षण मनोविज्ञान से निकला है। कार्य-विश्लेषण वास्तव में एक ऐसा उपकरण हैं। जिसके माध्यम से ज्ञान, कौशल

तथा अभिवृत्तियों आदि को परिभाषित किया जाता है। छोटे-छोटे तत्वों मे विश्लेषित किया जाता है। और पुनः उन्हे संश्लेषित किया जाता है।

NOTES

कार्य विश्लेषण सीखने के उद्देश्यों, शिक्षण नीतियों तथा शिक्षण युक्तियों के सम्बंध में सही निर्णय लेने में शिक्षक की सहायता करते है। कार्य-विश्लेषण से छात्रों को यह पता चलता है कि उन्हे क्या-क्या पढाना है। कौन-कौन से संबंधित तत्वों का अध्ययन करना है। तथा किन अधिगम परिस्थितियों मे कैसे पढ़ना है।

आई.के.डेवीज ने इस कार्य-विश्लेषण की चार प्रमुख विशेषताएँ बताई हैं।

कार्य-विश्लेषण में-

1. छात्रों के सीखने की क्रियाओं का विवरण दिया जाता है।
2. अपेक्षित व्यवहारों की पहचान की जाती है।
3. उन उद्दीपनों तथा परिस्थितियों को पहचाना जाता है। जिनके द्वारा छात्र अपेक्षित व्यवहार करते है।
4. वांछित व्यवहार परिवर्तन के लिये लक्ष्यों, युक्तियों, कौशलों व व्यूह रचनाओं के संबंध मे निर्णय लिया जाता है कि इनमें से कौन सा उपयुक्त है।

ये विशेषताएँ कार्य-विश्लेषण के लक्ष्यों की ओर संकेत करती है।

कार्य विश्लेषण के स्रोत :

अग्रंकित चित्र कार्य-विश्लेषण के विभिन्न स्रोतों का दिग्दर्शन करता है।

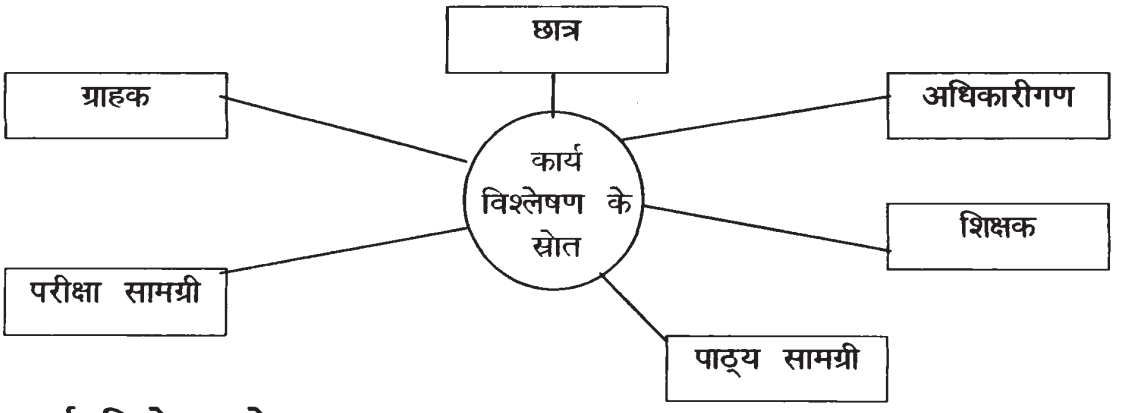

कार्य विश्लेषण के तत्व :

कार्य-विश्लेषण के दो प्रमुख तत्व होते है।

NOTES

1 भौतिक तत्व : इनका तत्व संबंध उपकरणों एवं कार्यों में सहायक अन्य तत्वों के प्रयोग से है।

2 मानसिक तत्व : इसका संबंध विधियों, निर्णयों तथा अन्य मानसिक भावों तथा विचारो से है।

कार्य विश्लेषण के प्रकार :

अधिकतर विद्वानों ने कार्य विश्लेषण को तीन भागों मे बाँटा है।

कार्य - विश्लेषण के प्रकार :

पाठ्य-वस्तु या प्रसंग विश्लेषण : पाठ्य वस्तु विश्लेषण में पाठ्य-वस्तु का विश्लेषण एक निश्चित उद्देश्य के अनुसार किया जाता है। यह विश्लेषण प्रायः शैक्षिक तथा बौद्धिक प्रकृति का होता है। इस विश्लेषण का लक्ष्य पाठ्य वस्तु के बारे में सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने का होता है।

पाठ्य-वस्तु विश्लेषण की विधियाँ : पाठ्य-वस्तु विश्लेषण की अनेक विधियाँ प्रचलित हैं। इनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण विधियाँ डेवीज, होमे, ग्लेसर तथा मेकनर आदि की मानी जाती हैं। इनमें डेवीज की विधि सर्वाधिक सरल, स्पष्ट तथा उपयोगी सिद्ध हुई है।

डेवीज ने अपनी विधि को मेट्रिक्स प्रविधि कहा है। इस विधि में सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्य वस्तु को उसके प्रकरणों मे बाटँा जाता है। फिर प्रत्येक प्रकरण को उसके तत्वों में विभाजित किया जाता है। और एक निश्चित क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। इस विधि में संश्लेषण व विश्लेषण दोनों ही प्रकार की प्रविधियाँ अपनायी जाती है।

2. क्रिया विश्लेषण : इसे व्यावसायिक विश्लेषण भी कहा जाता है। इसमें कुछ सामाजिक तथा व्यावसायिक क्रियाओं तथा भूमिकाओं का विश्लेषण किया जाता है।

उदाहरण :

विश्वविद्यालय के कार्यों विश्लेषण किया जाता है।

1 शिक्षण

2 अनुसंधान

3 प्रसार

1 भौतिक तत्व : इनका तत्व संबंध उपकरणों एवं कार्यों में सहायक अन्य तत्वों के प्रयोग से है।

2 मानसिक तत्व : इसका संबंध विधियों, निर्णयों तथा अन्य मानसिक भावों तथा विचारो से है।

NOTES

कार्य विश्लेषण के प्रकार :

अधिकतर विद्वानों ने कार्य विश्लेषण को तीन भागों मे बाँटा है।

कार्य - विश्लेषण के प्रकार :

पाठ्य-वस्तु या प्रसंग विश्लेषण : पाठ्य वस्तु विश्लेषण में पाठ्य-वस्तु का विश्लेषण एक निश्चित उद्देश्य के अनुसार किया जाता है। यह विश्लेषण प्रायः शैक्षिक तथा बौद्धिक प्रकृति का होता है। इस विश्लेषण का लक्ष्य पाठ्य वस्तु के बारे में सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने का होता है।

पाठ्य-वस्तु विश्लेषण की विधियाँ : पाठ्य-वस्तु विश्लेषण की अनेक विधियाँ प्रचलित हैं। इनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण विधियाँ डेवीज, होमे, ग्लेसर तथा मेकनर आदि की मानी जाती हैं। इनमें डेवीज की विधि सर्वाधिक सरल, स्पष्ट तथा उपयोगी सिद्ध हुई है।

डेवीज ने अपनी विधि को मेट्रिक्स प्रविधि कहा है। इस विधि में सर्वप्रथम सम्पूर्ण पाठ्य वस्तु को उसके प्रकरणों मे बाटँा जाता है। फिर प्रत्येक प्रकरण को उसके तत्वों में विभाजित किया जाता है। और एक निश्चित क्रम में व्यवस्थित किया जाता है। इस विधि में संश्लेषण व विश्लेषण दोनों ही प्रकार की प्रविधियाँ अपनायी जाती है।

2. क्रिया विश्लेषण : इसे व्यावसायिक विश्लेषण भी कहा जाता है। इसमें कुछ सामाजिक तथा व्यावसायिक क्रियाओं तथा भूमिकाओं का विश्लेषण किया जाता है।

उदाहरण :

विश्वविद्यालय के कार्यों विश्लेषण किया जाता है।

1 शिक्षण

2 अनुसंधान

3 प्रसार

NOTES

3. कौशल विश्लेषण : किसी विशिष्ट कार्य के सफल निष्पादन हेतु विभिन्न कौशलों की आवश्यकता होती है। इनका विश्लेषण ही कौशल विश्लेषण कहलाता है। जैसे शिक्षिक के विशिष्ट कौशल है।

1. प्रश्न पूछना
2. प्रेरणा देना
3. पुनबर्लन प्रदान करना
4. व्याख्या करना
5. स्पष्टीकरण देना
6. श्याम पट पर लिखाना आदि ।

NOTES

शिक्षण के स्तर :

शिक्षण के निम्नलिखित तीन स्तर है।

1. स्मृति स्तर 2. बोध स्तर 3. चिंतन स्तर

1. स्मृति स्तर :

स्मृति एक मानसिक प्रक्रिया है जो प्रत्येक प्राणी में किसी न किसी मात्रा में अवश्क पायी जाती है। वस्तुतः जब व्यक्ति किसी वस्तु, पदार्थ या स्थान को देखता है तो उस वस्तु, पदार्थ या स्थान की प्रतिमा या चिन्ह उसके मस्तिष्क में बन जाते हैं। इन्ही संचित चिन्हों या पूर्व समय में सीखी हुई बातों को याद करना ही स्मृति कहलाती है। दूसरे शब्दों में जब हम किसी वस्तु को देखते है तो हमारे अचेतन मन में उस वस्तु के अनुभव बनकर संचित होते रहते है। इन्ही संचित किये हुए भूतकालीन अनुभवों को आवश्यकता पड़ने पर जब हम प्रत्यास्मरण द्वारा पुनः चेतना में लाकर पहचान लेते है। तो यह स्मृति कहलाती है।

परिभाषा :

वुडवर्थ के अनुसार : सीखे हुए अनुभवों के सीधे उपयोग को स्मृति कहते है।

स्टाउट के अनुसार : स्मृति एक आदर्श पुनरावृत्ति है जिसमें अतीत काल के अनुभव उसी क्रम तथा ढ़ग से जागृत होते है। जैसे वे पहले हुये थे।

जे.एस.रास के अनुसार : स्मृति एक नया अनुभव है जो पूर्व अनुभवों की स्थितियों द्वारा निर्धारित होता है तथा दोनों के बीच का संबंध स्पष्ट समझा जाता है।

मैग्डूगल के अनुसार : स्मृति का तात्पर्य भूतकालीन धटनाओं के अनुभव की कल्पना करना है एवं पहचान लेना है कि वे अपने ही भूतकालीन अनुभव है।

स्मृति की अवस्थायें :

1 अधिगम : स्मृति केवल अधिगम या अनुभवों के अकिंत होने पर आधारित होती है। अतः स्मृति की पहली अवस्था किसी वस्तु या तथ्य के सीखने की है। सीखने का कार्य चेतन मन करता है। इसी अवस्था मे जीवन के अनुभव

मानसिक संस्कारों के रूप में हमारे मस्तिष्क में अंकित हो जाते है और आवश्यकता पड़ने पर पुनः वर्तमान चेतना में आ जाते है।

NOTES

2 धारण : सीखी हुई पाठ्य वस्तु या संस्कारों को मस्तिष्क में स्थायी रूप से बनाये रखना धारण कहलाता है। स्मरण रहे कि धारण करने की शक्ति प्रत्येक व्यक्ति में अलग-अलग मात्रा मे पायी जाती है जो व्यक्ति किसी बात को जितने अधिक समय तक अपने मस्तिष्क में धारण करता है। उसकी स्मृति उतनी ही अच्छी कहलाती है। स्मरण रहे कि धारण शक्ति मुख्यतः चार बातो पर निर्भर करती है। 1. मस्तिष्क 2. स्वास्थ्य 3. रूचि तथा 4 चितंन

3. प्रत्यास्मरण : सीखे हुये अनुभवों को चेतना मे लाना प्रत्यास्मरण कहलाता है। व्यक्ति की स्मृति का अच्छा या बुरा होना उसके भूतकालीन अनुभवों को पुनः स्मरण करने पर ही निर्भर करता है। उसने कितना अच्छा ही क्यों न सीखा हो व्यर्थ है। यदि आवश्यकता पड़ने पर उसे कुछ भी याद नही आता। स्मरण रहे कि जिन बातों को व्यक्ति उचित विधि से धारण नहीं करता उन बातों का प्रत्यास्मरण करते समय उसे अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

4. पहचान : किसी वस्तु अथवा व्यक्ति को देखकर यह बता देना कि हमने इसे पहले भी कभी देखा है पहचान कहलाता है। दूसरे शब्दों मे पहचान वह मानसिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा हम किसी वस्तु अथवा व्यक्ति के सम्पर्क में आकर यह बता देते हैं कि क्या वस्तु है अथवा कौन व्यक्ति है तथा उससे हमारा परिचय कब हुआ।

वर्गीकरण :

व्यक्तियों की भिन्न-भिन्न योग्यताओं के आधार पर स्मृति का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जाता है।

1. तात्कालिक स्मृति : तात्कालिक स्मृति उस स्मृति को कहते है। जिसमें व्यक्ति किसी बात को सीखाते ही तुरंत सुना देता है। इस प्रकार की स्मृति की दो विशेषतायें है।

क. यह अस्थाई होती है।

ख. इसका विकास आयु के साथ-साथ होता है।

2. स्थायी स्मृति : सीखी हुई बात को अधिक समय तक प्रत्यास्मरण कर सकना स्थायी स्मृति कहलाती है। दूसरे शब्दों मे जिन बातों से हमारा सहचर्य दृढ़ हो जाता है वे बाते हमें बहुत दिन तक याद रहती है।

NOTES

3. व्यक्तिगत स्मृति : भूतकालीन अनुभवों का प्रत्यास्मरण करते समय हमें उनसे संबंधित अपने निजी अर्थात् व्यक्तिगत अनुभवों की याद आ जाने को व्यक्तिगत स्मृति कहते है।

4. अव्यक्तिगत स्मृति : पुस्तको एवं साथियों से सीखी हुई बातों की याद आना अव्यक्तिगत स्मृति कहलाती है। इसमें अपने निजी अर्थात् व्यक्तिगत अनुभवों का कोई स्थान नही होता है।

5. सक्रिय स्मृति : सक्रिया स्मृति में अपने भूतकालीन अनुभवों का प्रत्यास्मरण करते समय कुछ प्रयास करने की आवश्यकता महसूस होती है।

6. निष्क्रिय स्मृति : निष्क्रिय स्मृति में हम को अपने भूतकालीन अनुभवों की याद बिना किसी प्रयास के स्वयं ही आ जाती है।

7. यांत्रिक स्मृति : यांत्रिक स्मृति को आदत जन्य तथा शारीरिक स्मृति की संज्ञा भी दी जाती है। जब शरीर को किसी कार्य के बार-बार करने की आदत पड़ जाती है। तो व्यक्ति को उस कार्य के प्रत्यास्मरण करने के लिये विशेष प्रयास की आवश्यकता नही पड़ती ।

8. रटंत स्मृति : रटंत स्मृति उस स्मृति को कहते है जिसमें तथ्यों को बिना सोचे समझे रट लिया जाता है। इस प्रकार की स्मृति बाल्य अवस्था में बड़ी तीव्र होती है।

9. तार्किक स्मृति : किसी बात की वृद्धि के प्रयोग द्वारा सोच समझ कर सीखना तथा उसको आवश्यकता पड़ने पर प्रत्यास्मरण करना तार्किक स्मृति कहलाती है।

स्मृति स्तर के शिक्षण का प्रतिमान :

हरबार्ट महोदय के अनुसारः

1 उद्देश्य :

स्मृति शिक्षण का उद्देश्य विधार्थी तथ्यो को रटने पर बल देते हुये उनमें निम्नलिखित क्षमताओं को विकसित करता है।

NOTES

(क) मानसिक पक्षो का प्रशिक्षण

(ख) तथ्यो का ज्ञान देना

(ग) सीखे हुए तथ्यों को याद रखना

(घ) याद किये हुऐ तथ्यों को प्रत्यास्मरण तथा पुनः प्रस्तुत करना

2 सरंचना :

हरबार्ट महोदय के अनुसार स्मृति स्तर के शिक्षण की व्यवस्था को पाँच पदों में बाँटा जो हरबार्ट पचँपद प्रणाली के नाम से प्रसिद्व है।

(क) 1. प्रस्तावना : प्रस्तावना पाठन विधि का प्रथम पद है। इस में छात्रों के पूर्वज्ञान को जाँचने के लिये कुछ प्रश्न किये जाते हैं, जिससे उनमें नवीन ज्ञान को सीखने के लिये उत्सुकता उत्पन्न हो।

2. उद्देश्य कथन : यहाँ पर विधार्थियों को प्रकरण स्पष्ट हो जाता है। तथा शिक्षण स्वयं स्पष्ट शब्दों मे प्रकरण को श्यामपट पर लिखा देता है।

(ख) विषय प्रवेश : इस पद में विद्यार्थियो के सहयोग से मूल पाठ का विकास किया जाता है।

(ग) तुलना तथा सम्बंध : इस पद को हरबार्ट महोदय ने संबंध की संज्ञा दी थी। यहाँ पर पढ़ाये गये तथ्यों घटनाओं अथवा प्रयोगों का तुलना के द्वारा आपस में संबंध स्थापित किया जाता है। जिससे विद्यार्थियों की समझ में पढ़ाई गई बातें स्पष्ट रूप में आ जाये।

(घ) निष्कर्ष : इस पद को हरबार्ट महोदय ने प्रणाली अथवा व्यवस्था की संज्ञा दी थी। मूल पाठ को समझाने के पश्चात् इस पद मे विद्यार्थियों को सोचने विचारने के अवसर प्रदान किये जाते है।

(ङ) प्रयोग : प्रयोग पाठन-विधि का अंतिम पद है। इस पद में यह देखा जाता है कि सीखे हुये ज्ञान को नई परिस्थितियों मे प्रयोग किया जा सकता है। या नही

3. सामाजिक प्रणाली : शिक्षण की प्रक्रिया सामाजिक एवं व्यावसायिक है। इस सामाजिक व्यवस्था के सदस्य हैं। 1. शिक्षक 2. विद्यार्थी इस स्तर पर शिक्षक का व्यवहार तानाशाही अथवा निरकुंशतावादी प्रवृत्ति पर आधारित होते हुये अधिकारपूर्ण होता है।

4. मूल्यांकन प्रणाली : स्मृति स्तर के शिक्षण में परीक्षा मे भी रटने पर ही बल दिया जाता है। अतः इस स्तर के शिक्षण का मूल्यांकन करते समय मौखिक तथा लिखित दोनों प्रकार की परीक्षाओं का प्रयोग किया जाता है।

NOTES

बोध स्तर का शिक्षण :

बोध स्तर के शिक्षण के लिये यह आवश्यक है। कि शिक्षण पहले स्मृति स्तर पर हो चुका हो। इसके अभाव में वांछित फल प्राप्त करने की आशा करना कोरी कल्पना है। स्मरण रहे कि बोध स्तर के शिक्षण में शिक्षक अपने अनुदेश को बोध स्तर पर रखने का प्रयास करते हुये विद्यार्थियों के सामान्यीकरण तथा सिद्धांतो एवं तथ्यों के सबंध में बोध कराने पर बल देता है।

बोध स्तर के शिक्षण का प्रतिमान :

बोध स्तर के शिक्षण प्रतिमान का प्रतिपादन मौरीसन ने किया है। अतः इसे मौरीसन के शिक्षण प्रतिमान की संज्ञा दी जाती है।

(क) उद्देश्य : मौरीसन के अनुसार बोध स्तर के शिक्षण का उद्देश्य यह है कि विद्यार्थी प्रत्यय का स्वामीत्व प्राप्त कर लें। दूसरे शब्दों में बोध स्तर के शिक्षण में शिक्षक पाठ्यवस्तु के स्वामीत्व पर बल देता हैं। जिनसे विद्यार्थियों के व्यक्तित्व में वांछित परिवर्तन हो जाय।

(ख) संरचना : मौरीसन महोदय ने बोध स्तर के शिक्षण की व्यवस्था को पाँच सोपानों में विभाजित किया जिनका अनुसरण करते हुऐ शिक्षक बोध स्तर के लिये शिक्षण तथा अधिगम की परिस्थितियाँ उत्पन्न कर सकता है। इस प्रतिमान के पाँच सोपानों का क्रम निम्नलिखित है।

1 अन्वेषण :

(क) पूर्व ज्ञान का पता लगाना। इसके लिये प्रश्न पूछकर परीक्षण किया जाता है।

(ख) पाठ्य वस्तु का विश्लेषण करते हुए उसके अवयवों को मनो-वैज्ञानिक दृष्टि से क्रमबाद्ध रूप में तर्कपूर्ण ढ़ग से व्यवस्थित करना।

(ग) यह निश्चित करना कि नवीन ज्ञान अथवा पाठ्य वस्तु की इकाइयों को किस प्रकार से प्रस्तुत किया जाय।

NOTES

2. प्रस्तुतीकरण :

(क) शिक्षण पाठ्यवस्तु को छोटी-छोटी इकाइयों में प्रस्तुत करता है। साथ ही वह यह भी प्रयास करता है कि उक्त सभी इकाइयों मे क्रम बना रहें तथा उसका विद्यार्थियों से सबंधं स्थापित हो जाय।

(ख) पाठ्यवस्तु प्रस्तुत करते समय शिक्षक को इस बात का भी निदान करना है कि कक्षा के विद्यार्थियों को पाठ्यवस्तु का बोध हुआ या नही। यदि नही तो कितनों को।

(ग) शिक्षण पाठ्यवस्तु की उस समय तक पुनरावृत्ति करता है जब तक वह अधिकांश विद्यार्थियों की समझ में पूरी तरह न आ जाय।

3 परिपाक :

(क) परिपाक के द्वारा विद्यार्थियों को सामान्यीकरण के लिये अवसर दिये जाते है। जिससे उन्हे प्रत्यय पर स्वामीत्व प्राप्त हो जाये।

(ख) परिपाक के अवसर पाठ्यवस्तु की गहनता पर बल देने के लिये दिये जाते है।

(ग) परिपाक के समय प्रत्येक विद्यार्थी अपनी-अपनी आवश्यकता के अनुसार अध्ययन करता है।

(घ) परिपाक के लिये विद्यार्थी प्रयोगशाला तथा पुस्तकालय में जाकर स्वयं कार्य करते है। इसलिये गृहकार्य भी दिया जाता है।

(ङ) परिपाक के कालाशं में शिक्षक इस बात का परीक्षण करता है कि विद्यार्थियों की पाठ्यवस्तु का स्वामीत्व हुआ अथवा नही। यदि ऐसा नही हुआ तो शिक्षक को पर्यवेक्षण मे सतकर्ता बरतते हुए परिपाक के लिये पुनः अवसर देना चाहिये।

4. व्यवस्था :

परिपाक का कालांश स्वामित्व परीक्षा का होता है। स्वामीत्व परीक्षण में सफल होने के पश्चात् विद्यार्थी पाठ्यवस्तु की प्रकृति के अनुसार व्यवस्था अथवा वर्णन कालांश में प्रवेश करते है। सभी विद्यार्थी पाठ्यवस्तु को अपनी भाषा में बिना किसी की सहायता के लिखते है।

5. वर्णन :

वर्णन बोध स्तर के शिक्षण का अतिम सोपान है। इस कालांश में विद्यार्थी पाठ्यवस्तु को शिक्षक तथा अपने साथियों के सामने मौखिक रूप से प्रस्तुत करतें है।

NOTES

6. सामाजिक व्यवस्था :

बोध स्तर के शिक्षण में सामाजिक प्रणाली विभिन्न सोपनों में बदलती रहती है। प्रस्तुतीकरण सोपान में शिक्षक अधिक क्रियाशील रहते हुए विद्यार्थियों के व्यवहार को स्मृति स्तर की भाँति नियंत्रित करता है तथा आवश्यक प्रेरणा भी देता है।

7. मूल्यांकन प्रणाली :

बोध स्तर के शिक्षण में सामाजिक प्रणाली एक सी नही रहती वरन् बदलती रहती है। विद्यार्थियों को परिपाक में प्रयोग करने के लिये प्रस्तुतीकरण की परीक्षा पास करनी पड़ती है।

चितंन स्तर के शिक्षण का प्रतिमान :

चिंतन स्तर के शिक्षण प्रतिमान को प्रतिपादिक करने का श्रेय हण्ट महोदय को है।

1. उद्देश्य :

(क) विद्यार्थियों में समस्या समाधान की क्षमता विकसित करना।

(ख) विद्यार्थियों मे आलोचनात्मक तथा सर्जनात्मक चितंन विकसित करना ।

(ग) विद्यार्थियों की स्वतंत्र तथा मौलिक चितंन शक्ति को विकसित करना।

2. सरचंनाः

(क) पहले सोपान में शिक्षक विद्यार्थियों के सामाने समस्यात्मक परिस्थिति उत्पन्न करता है।

(ख) दूसरे सोपान मे विद्यार्थी समाधान हेतु उपकल्पना बनाते है। स्मरण रहे कि एक समस्या के समाधान हेतु एक से अधिक उपकल्पनायें भी बनायी जा सकती है ।

NOTES

(ग) तीसरे सोपान में विद्यार्थी उपकल्पनाओं की पुष्टि के लिये आवश्यक प्रदत्तों का संकलन करते है।

(घ) चौथे सोपान में उपकल्पना का परीक्षण किया जाता है। इस परीक्षा के आधार पर निर्णय निकाले जाते है।

3. सामाजिक प्रणाली : चितंन स्तर के शिक्षण में कक्षा का वातावरण पूर्व रूप से स्वतंत्र और खुला हुआ होता हैं। ऐसे वातावरण में शिक्षक का स्थान गौण होता है तथा विद्यार्थी का मुख्य इस स्तर पर शिक्षक के तीन प्रमुख कार्य होते हैं।

(क) विद्यार्थियों के सामने समस्या उत्पन्न करना।

(ख) शिक्षण के समय वाद-विवाद तथा सेमीनार आदि का प्रयोग करना।

(ग) विद्यार्थियों के आकाक्षां स्तर को ऊचाँ उठाना।

4. मूल्यांकन प्रणाली : चितंत स्तर के शिक्षण की निष्पत्तियों के लिये वस्तुनिष्ठ परीक्षा उपयोगी नही होती। विद्यार्थियों की क्षमताओं का उचित मूल्यांकन केवल निबंधात्मक परीक्षाओं के द्वारा ठीक प्रकार से किया जा सकता है।

शिक्षण नीति :

अर्थ : दि कॉलिन इंग्लिश जैम कोष 1968 के अनुसार नीति या स्ट्रेजी का अर्थ युद्ध कला या युद्ध कौशल है। शब्द कोष में भी नीति या स्ट्रेजी का अर्थ युद्ध में सेना को उचित स्थान पर नियुक्त करने की ऐसी कला है जिससे किसी विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति हो जायें। स्पष्ट है कि नीति एक ऐसी योजना या कार्य करने का मार्ग है। जिसका सम्बंध कार्य-प्रणाली से होता है।

स्टोन्स व मोरिस महोदय के अनुसार : शिक्षण नीति पाठ की एक सामान्यीकृत योजना है। जिसमें अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन की संरचना अनुदेशन के उद्देश्यों के रूप में सम्मिलित होती है।

शिक्षण-विधि एवं आव्यूह में अतंर

प्रायः अधिकतर व्यक्ति शिक्षण-विधि या पद्वति तथा शिक्षण आव्यूह या नीतियों को एक ही मानते है। लेकिन ऐसा नही हैं

1. **शिक्षण विधि :** इसमें पाठ्यवस्तु तथा प्रस्तुतीकरण का ढ़ग प्रमुख पक्ष होता है। शिक्षण विधि का निर्धारण पाठ्यवस्तु की प्रकृति के अनुसार ही किया जाता है। प्रस्तुतीकरण के तीन ढ़ग हो सकते है।

NOTES

(क) **कथन विधि :** व्याख्यान प्रश्न आदि।

(ख) **कार्य विधि :** प्रोजेक्ट विधि।

(ग) **दृश्य विधि :** प्रदर्शन निरीक्षण आदि।

2. शिक्षण विधि मे सम्पूर्ण उपागम का अनुसरण किया जाता है लेकिन शिक्षण आव्यूह या नीति में सूक्ष्म उपागम को अपनाया जाता है।
3. शिक्षण विधियों को परम्परागत मानव-व्यवस्था सिद्धांत पर आधारित मानते है। शिक्षण नीतियो या आव्यूह को आधुनिक मानव व्यवस्था सिद्धांत पर आधारित माना जाता है।
4. शिक्षण विधियों के मूल्याकंन का मानदण्ड पाठ्यवस्तु का स्वामित्व माना जाता है जबकि शिक्षण नीतियों का मानदण्ड उद्देश्यों की प्राप्ति मानते है।
5. शिक्षण विधियों की अवधारणा है कि शिक्षण एक कला है। लेकिन शिक्षण आव्यूह या नीतियों की अवधारणा है कि शिक्षण एक विज्ञान है।
6. शिक्षण विधियों मे कार्य तथा प्रस्तुतीकरण को महत्व दिया जाता है लेकिन शिक्षण नीतियों मे व्यवहारों तथा सम्बंधों को महत्वपूर्ण माना गया है।
7. शिक्षण विधियों मे शिक्षण उद्देश्यों को महत्वपूर्ण नही माना जाता जबकि शिक्षण आव्यूह या नीतियों मे उद्देश्यों को महत्वपूर्ण माना जाता है।
8. शिक्षण विधियों का मुख्य लक्ष्य प्रभावशाली प्रस्तुतीकरण करना है तथा शिक्षण आव्यूह या नीतियों का मुख्य लक्ष्य सम्पूर्ण अधिगम परिस्थितियों को पैदा करना है।

शिक्षण नीतियों के प्रकार :

1. **प्रभुत्ववादी नीतियाँ :** प्रभुत्ववादी नीतियाँ परम्परागत शिक्षण की नीतियाँ है। ये पाठ्यवस्तु तथा शिक्षक केन्द्रित होती हैं। इनका प्रयोग करते समय शिक्षण का स्थान मुख्य होता है। तथा विधार्थी का गौण। शिक्षक पाठ्यवस्तु को स्वयं निर्धारित करता है। तथा वह अपने आपको आदर्श मानकर विद्यार्थियों की

रूचियों, रूझानों, क्षमताओं, योग्यताओं तथा आवश्यकताओं का गला घोंट कर उनके मस्तिष्क मे ज्ञान को बाहर से बलपूर्वक ठूसंने का प्रयास करता है।

NOTES

दूसरे शब्दों मे इस प्रकार की शिक्षण नीतियों का प्रयोग करते समय केवल सकुंचित दृष्टिकोण वाला शिक्षक तो सक्रिय रहता है। परंतु उसकी कक्षा के सारे विद्यार्थी भयभीत श्रोता की भाँति निष्क्रिय रूप से बैठे हुये उसके आदेशों का पालन करते रहते है। भले ही वे अशुद्ध ही क्यों न हो। ऐसी स्थिति मे उन्हें अपने विचारो को व्यक्त करने की स्वतंत्रता बिल्कुल नही होती। इस प्रकार प्रभुत्ववादी नीतियो के द्वारा केवल ज्ञानात्मक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये केवल मानसिक विकास पर बल देते हुये सामूहिक विकास की ओर कोई ध्यान नही दिया जाता है।

प्रभुत्ववादी शिक्षण नीतियों के अर्न्तगत-भाषण, प्रदर्शन, ट्यूटोरियल तथा अभिक्रमित अनुदेशन आदि को सम्मिलित किया जाता है।

2. जनतांत्रिक नीतियाँ : जनतांत्रित नीतियाँ बाल केन्द्रित होती है। इनमे पाठ्यवस्तु को छात्र स्वयं निर्धारित करते है। इनका उपयोग करते समय छात्र का स्थान मुख्य होता है। तथा शिक्षक का गौण परिणामस्वरूप इनके प्रयोग द्वारा शिक्षक द्वारा छात्रों के बीच अधिक से अधिक अंतः प्रक्रिया होती है। जिससे छात्रों की रूचियों, रूझानों, क्षमताओं, योग्यताओं तथा आवश्यकताओं एवं मानसिक स्तर के अनुसार उनका अधिक से अधिक विकास होते हुये उनमे सर्जनात्मक क्षमताओं का विकास होता रहता है। वाद-विवाद, खोज, अन्वेषण, योजना पद्धति, समीक्षा, गृहकार्य पात्र, अभिनय स्वतंत्र अध्ययन, संवेदनशील प्रशिक्षण आदि

शिक्षण के प्रतिमान :

एक समय था जब शिक्षा के क्षेत्र में सीखने के सिद्धांतो को अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता था। धीरे-धीरे अनुभव तथा शोध के आधार पर यह ज्ञात हुआ कि सीखने के सिद्धांत शिक्षण की समास्याओं को सुलझाने मे समर्थ नही है।

शिक्षण प्रतिमान, शिक्षण सिद्धांत विकसित करने की ओर पहला कदम है। ये शिक्षण सिद्धांतो को वैज्ञानिक आधार प्रदान करते है। ये स्वयं सिद्ध कल्पनाएँ

होती है। जिनका प्रयोग शिक्षक अपने शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिये करता है।

NOTES

हायमन के अनुसार : शिक्षण प्रतिमान शिक्षण के बारे मे सोचने-विचारने की एक रीति है, जो वस्तु के अन्तनिर्हित गुणों को परखने के लिए आधार प्रदान करती है। प्रतिमान किसी वस्तु को विभाजित तथा व्यवस्थित करके तार्किक रूप में प्रस्तुत करने की विधि है।

पौलडी.ईगन के अनुसार : विशिष्ट अनुदेशात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये निर्मित उपचारात्मक शिक्षण व्यूह रचनायें ही प्रतिमान है।

भटनागर के अनुसार : Teaching model may be considered as a combination of learning goals, environmental manipulations and other processes.

एन.के.जंगीरा एवं अजीत सिह : शिक्षण प्रतिमान क्रमबद्व एवं अंतर संबंधित तत्वों का वह समूह है जो निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये शैक्षिक क्रियाओं एवं वातावरणीय सुविधाओं की योजना बनाने एवं उन्हे क्रियान्वित करने में सहायता करता है।

विशेषताये :

1. शैक्षिक प्रतिमान उचित शैक्षिक वातावरण पैदा करने की विधियों पर प्रकाश डालते है।
2. शैक्षिक प्रतिमान अपनी मान्यताओं के आधार पर अधिगम अनुभवों की व्यवस्था करते है।
3. शैक्षिक प्रतिमान छात्रों एवं शिक्षकों के मध्य अन्तःक्रिया को निर्देशित करते है।
4. शैक्षिक प्रतिमान शिक्षण प्रक्रिया मे पूर्ण सुधार लाने के लिये प्रयत्नशील रहते है।
5. प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान के निश्चित मूलभूत आधार होते है।
6. ये शिक्षक और छात्रों की रूचि का विनियोग करते है
7. शिक्षण प्रतिमान प्रतिमान सामान्यतया शिक्षक के व्यक्तिगत मतों, दर्शन, चितंन तथा मूल्यों आधारित होते है ।
8. प्रत्येक प्रतिमान किसी न किसी प्रकार के दर्शन से प्रभावित होता है।

NOTES

9. ये दार्शनिक दार्शनिक सिद्धांतो तथा मनोवैज्ञानिक नियमों पर आधारित होता है।
10. ये शिक्षक के व्यक्तित्व की गुणात्मक उन्नति करने की ओर प्रयत्नशील होते है।
11. प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान की एक निश्चित व्यवस्था होती है।
12. शिक्षण प्रतिमान शिक्षण को एक कला के रूप में विकसित करने में सहायक होते है।

शिक्षण प्रतिमान के तत्व :

1. लक्ष्य या उद्देश्य : प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान का एक निश्चित उद्देश्य अवश्य होता है। जिसे उस प्रतिमान का केन्द्र बिन्दु कहा जाता है।

2. संरचना : शिक्षण प्रतिमान की संरचना से यह पता चलता है कि शिक्षण की क्रियाओं, नीतियों, युक्तियों तथा अन्तः क्रियाओ को किस प्रकार से क्रमबद्ध किया जाना चाहिये, ताकि वांछित उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके

3. सामाजिक प्रणाली : प्रत्येक प्रतिमान की अपनी एक सामाजिक प्रणाली होती है जो हमें बताती है कि छात्र और शिक्षकों के मध्य क्रिया तथा अन्त क्रिया का आयोजन किस प्रकार से किया जाना चाहिये, जिससे कि छात्रों के व्यवहार पर नियत्रंण रहे। साथ ही उनमे वांछित परिवर्तन भी लाया जा सके।

4. मूल्यांकन प्रणाली : मूल्याकंन प्रणाली शिक्षण प्रतिमान का चौथा महत्वपूर्ण तत्व है। इसके द्वारा हमे यह मालूम होता है कि शिक्षण के उद्देश्य हमने किस सीमा तक प्राप्त किये हैं और छात्रों के व्यवहारों मे परिवर्तन कहाँ तक लाया जा सका है। इस प्रकार से यह प्रणाली शिक्षण की सफलता या असफलता की कथा कहती है।

प्रमुख प्रतिमानो का विवरणः

1. रिचर्ड सचमैन पूछताछ प्रशिक्षण प्रतिमान :

इस प्रतिमान का विकास 1966 मे हुआ था। इस प्रतिमान के प्रवर्तक सचमैन का विश्वास था कि बालक स्वभाव से जिसासु होते है तथा वे अपनी

जिज्ञासा की संतुष्टि के लिये पूछताछ में आनन्द का अनुभव करते है पूछताछ की प्रक्रिया से बच्चों में पूछताछ के कौशल का विकास होता है।

NOTES

(क) उद्देश्य :

इस प्रतिमान का मुख्य उद्देश्य छात्रो मे ज्ञानात्मक कौशलो का विकास करना है । छात्र स्वयं पूछताछ के माध्यम से प्रत्ययों की तार्किक ढ़ग से व्याख्या करता है। छात्रों की जिज्ञासा अभिवृत्ति एवं अभिरुचियों का विकास होता है। जिससे छात्र जटिल परिस्थितियों उसके समाधान के लिये प्रेरित होकर क्रमबद्ध तरीके से कार्य करते है।

(ख) संरचना :

1. समस्या का प्रस्तुतीकरण करना : इसमें शिक्षक के निर्देशन में छात्र समस्या का चयन करते है।

2. समस्या संबंधी प्रयोग करना : लगभग आधे घण्टे तक समस्या से संबंधित सूचना प्राप्त करने के लिये छात्र ऐसे प्रश्न पूछता है जिनका उत्तर शिक्षक केवल हाँ या नही में देता है। छात्रों द्वारा यह पूछताछ उस समय तक चलती है। जब तक छात्र प्रस्तुत घटना/समस्या के स्पष्टीकरण तक नही पहुँच जाते है।

3. छात्रों व शिक्षकों के समस्या समाधान के लिये प्रयास : इसमें छात्र अन्वेषण तथा प्रत्यक्ष परीक्षण करके नये तत्वों से परिचित होने के लिये प्रदत्तों का सकंलन करता है। परिकल्पनाओं का निर्माण करता है तथा उनके आधार पर कारण कार्य संबंधो की परीक्षा करता है।

4. सूचनाओं का सगंठन : प्रदत्त एकत्रित करते समय सूचनाओं के संगठित किया जाता है। शिक्षक छात्रों को एकत्रित प्रदत्तों से परिणाम निकलवाता है और परिणामों की व्याख्या करता है।

5. पूछताछ प्रक्रिया का विश्लेषण : इसमें छात्रों को उसकी पूछताछ प्रक्रिया का विश्लेषण करने के लिये कहा जाता है साथ ही यह भी निर्णय लिया जाता है कि आवश्यक सभी सूचनाएँ प्राप्त हुई या नही ।

NOTES

6. सामाजिक प्राणी : इस प्रतिमान मे शिक्षक तथा छात्र दोनों की भूमिकाएँ महत्वपूर्ण है शिक्षक व छात्रों के मध्य सहयोग का खुला वातावरण होता है।

7. मूल्यांकन प्रणाली : इस प्रतिमान मे मूल्यांकन के लिये विशेष रूप से प्रयोगात्मक परीक्षाओं का प्रयोग किया जाता है इससे पता चलता है कि छात्र समस्या समाधान के माध्यम से अपना कार्य कितने और किस सीमा तक प्रभावशाली ढ़ग से करता है।

(ग) विशेषताएँ :

1 यह वैज्ञानिक अध्ययनों मे अधिक उपयोगी होता है।

2 यह छात्रों मे प्रश्न करने की प्रवृत्ति का निर्माण करती है।

3 छात्रों मे इससे वैज्ञानिक अभिवृत्ति का विकास होता है।

4 इस प्रतिमान के प्रयोग से छात्रों को स्पष्ट तथा व्यावहारिक ज्ञान का प्रदान किया जाता है।

5 छात्रों की जिज्ञासु प्रवृत्ति का विकास होता है।

2. संप्रत्यय उपलब्धि प्रतिमान

संप्रत्यय उपलब्धि प्रतिमान का विकास जे.एस.ब्रूनर तथा उसके सहयोगियों ने किया। इस प्रतिमान का विकास मुख्यतः छात्रों मे आगमन तर्क की योग्यता में वृद्धि करना होता है। तथा छात्रों में संप्रत्ययों को विकसित करना होता है।

(क) उद्देश्य :

इस प्रतिमान का मुख्य उद्देश्य छात्रों की आगमन तर्क शक्ति का विकास करना है। इसका आधार मनोविज्ञान है।

ब्रूनर तथा उनके सहयोगियो ने निम्नांकित चार उद्देश्य इस प्रतिमान के दिये है।

1. छात्रों को संम्प्रत्ययों की प्रकृति के विषय में ज्ञान प्रदान करना ताकि वे वस्तुओं के गुणो तथा उनकी विशेषताओं के आधार पर वर्गीकरण करने मे दक्षता प्राप्त कर सके।
2. छात्रों को इस योग्य बनाना कि उनमे सही संप्रत्ययों का विकास हो सके।
3. छात्रों मे विशिष्ट सम्प्रत्ययों का विकास करना ।

4. छात्रों मे चिंतन संबंधी नीतियों का विकास करना

(ख) संरचना :

1. प्रदत्तों का संकलन : छात्रों के सम्मुख किसी घटना या व्यक्ति से संबंधित विभिन्न प्रकार के प्रदत्त प्रस्तुत किये जाते है।

2. नीति विश्लेषण : इस चरण में छात्र प्राप्त सूचनाओं का विश्लेषण करते है। अधिकतर यह विश्लेषण या सामान्य से विशिष्ट की ओर सूत्र पर आधारित होता है।

3. प्रस्तुतीकरण : इस सोपान मे छात्र अपनी आयु एवं अनुभव के आधार पर विभिन्न प्रकार के प्रत्ययों एवं गुणों का विश्लेषण करता है। और इस विश्लेषण की रिर्पोट लिखित रूप मे प्रस्तुत करता है।

4. अभ्यास : इस सोपान में छात्र सीखे हुए प्रत्यय का उपयोग एवं अभ्यास करना उसकी व्याख्या करना तथा असंगठित सूचनाओं के आधार पर सम्प्रत्यय की रचना करना शामिल है।

(ग) सामाजिक प्रणाली :

इसमें शिक्षक छात्रों को प्रेरित करते है और प्रत्ययों के निर्माण तथा विश्लेषण में मार्ग-दर्शन करते है। शिक्षक का इस प्रतिमान मे महत्वपूर्ण स्थान होता है। क्योंकि वही छात्रों के सामने विभिन्न प्रदत्त रखता है योजना बनवाता है और छात्रों को निर्देशित करता है। इसमे शिक्षक का प्रमुख उद्देश्य छात्रों को प्रत्यय निर्माण मे सहायता देना होता है।

(घ) मूल्यांकन प्रणाली :

इस प्रतिमान के मूल्यांकन मे निबधांत्मक तथा वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं की मदद ली जाती है और इनके द्वारा मूल्याकंन, सुधार तथा परिवर्तन के माध्यम से नवीन प्रत्ययों के विषय मे सूचना दी जाती है।

विशेषताएँ :

1. उदाहरणों के आधार पर जब प्रत्ययों को सीखने और समझने का प्रयास किया जाता है। तब यह प्रतिमान अधिक उपादेय होता है।
2. यह प्रतिमान भाषा सीखने में अधिक उपयोगी होता है।

NOTES

NOTES

3. यह गणित तथा विज्ञान के आधारभूत सिद्धांतो को सरलता तथा सुगमता से समझाने का प्रयास करता है।
4. यह प्रतिमान उन सभी विषयों मे जिनमें प्रत्यय निर्माण के अवसर अधिक होते है। अधिक उपादेय सिद्ध होता है।

अन्तः क्रिया विश्लेषण :

शिक्षक के व्यवहारों या क्रियाओं को क्रमबद्ध निरीक्षण प्रविधि के द्वारा जो विश्लेषण किया जाता है उसे अन्तःक्रिया विश्लेषण कहते है।

उद्देश्य :

1. शिक्षक की विशेषताओं का अध्ययन करना।
2. निरीक्षण के माध्यम से शिक्षक के व्यवहारों का अध्ययन करना।
3. बोध स्तर के व्यवहार की प्रकृति का अध्ययन करना ।
4. शिक्षक के सामाजिक तथा संवेगात्मक परिवेश मे अन्तःक्रिया का विश्लेषण करना।
5. शिक्षक व छात्र व्यवहार का अध्ययन करना।
6. कक्षा-कार्य का विश्लेषण करना।
7. प्रशिक्षण प्रभाव तथा शब्दिक सम्प्रेषण का विश्लेषण करना।

फलैन्डर्स की अन्तः क्रिया विश्लेषण प्रणाली :

नैड ए0फलैन्डर ने सन् 1959 में कक्षा के शाब्दिक व्यवहार पर आधारित एक विशिष्ट प्रणाली विकसित की जो कक्षा के अंर्तगत होने वाली विभिन्न घटनाओं का निरीक्षण क्रमबद्ध रूप से वैज्ञानिक ढ़ग से करती है।

इसे तीन प्रमुख भागों मे विभाजित किया गया है।

1. शिक्षक कथन
2. छात्र कथन
3. मौन या विभ्रांति

1. शिक्षक कथन : शिक्षक द्वारा कक्षा शिक्षण के दौरान जो कुछ भी कार्य तथा क्रियाएँ की जाती हैं। उन्हें शिक्षक कथन मे रखा जाता है। इनमें केवल शाब्दिक व्यवहार सम्मिलित किया जाता है।

2. छात्र कथन : छात्रों द्वारा कक्षा मे प्रदर्शित शाब्दिक व्यवहार क्रियाएँ, अनुक्रियाएँ छात्र कथन के अंतगर्त आते है। इसे दो भागों मे बाटाँ गया है।

(क)छात्र कथन अनुक्रिया : शिक्षक की क्रिया, निर्देश तथा प्रश्नों का छात्रों द्वारा उत्तर देना इसमें आता है।

(ख)छात्र कथन स्वोपक्रम : इसमें छात्र स्वयं वार्ता के लिये पहल करता है वह प्रश्न पूछता है। स्पष्टीकरण माँगता है। और अपने विचारों को प्रस्तुत करता है। उसे अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करने और विकास करने की स्वतंत्रता होती है।

3. मौन या विभ्रांति : कक्षा मे कुछ समय के लिये सभी एक साथ बोलते है जिससे कक्षा मे अव्यवस्था हो जाती है। जिसमें किसी को कुछ भी समझ मे नही आता या कक्षा मौन हो जाती है।

अन्तः क्रिया मैट्रिक्स की रचना :

कक्षा के व्यवहारों का क्रमबद्ध निरीक्षण करके उन्हे तालिका या अन्तः क्रिया मैट्रिक्स मे लिखा जाता है। इस तालिका में निम्नाकित बिन्दु स्पष्ट हो जाते है।

1. कक्षा मे शिक्षक का व्यवहार कैसा है।
2. छात्र कितने सक्रिय है ।
3. शिक्षक कितना व कैसा प्रोत्साहन छात्रों को देते है।
4. छात्र व शिक्षक के व्यवहारों मे क्या कमियाँ हैं। उन्हें कैसे सुधारा जा सकता है।
5. कक्षा-शिक्षण समग्र रूप से कैसा है।

फलैण्डर्स विश्लेषण की दस श्रेणियाँ :

फलैण्डर्स द्वारा विकसित दस श्रेणी विधि या अन्तः क्रिया विश्लेषण विधि के दो भाग है।

1. अंकन की प्रक्रिया : निरीक्षणकर्ता कक्षा मे शिक्षण के आधार पर या पाठ के ध्वनि टेप के आधार पर विभिन्न अन्तः प्रक्रियाओं का अकँन करता है। पाठ का निरीक्षण मम से कम 20 मिनट तक किया जाता है।

NOTES

NOTES

2. व्याख्या की प्रक्रिया : अंकन से प्राप्त आकँडों की व्याख्या आवश्यक हो जाती है। इसी से शिक्षक के व्यवहार का विश्लेषण होता है। आकँड़ो की व्याख्या इस प्रकार करते है।

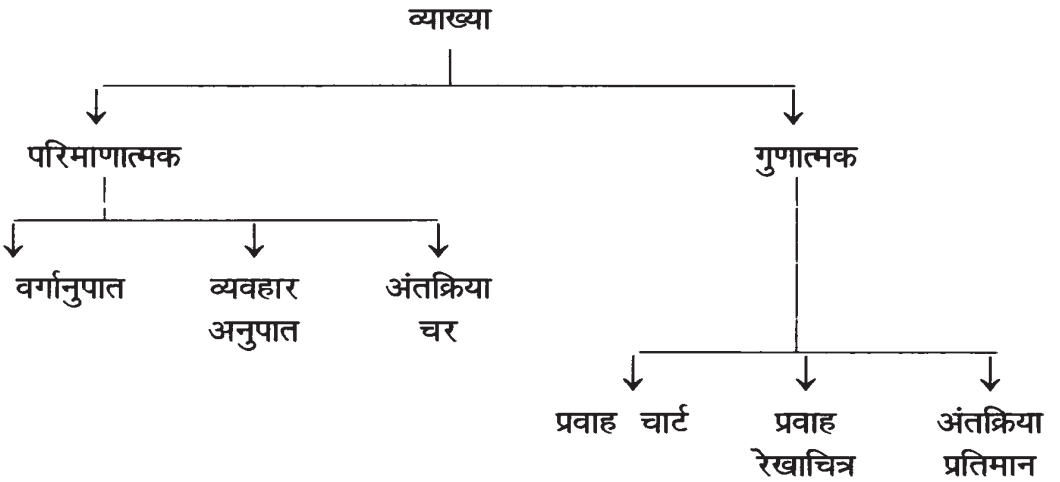

3. परिमाणात्मक व्याख्या : परिमाणात्मक व्याख्या के अर्न्तगत प्रत्येक पद की व्याख्या इन सूत्रों से की जाती है। यहाँ पर हम इस श्रेणियों की संख्या के संदर्भ में ही सूत्र लिखते है।

1. $\frac{\text{शिक्षक कथन}}{\text{Teacher Talk TT}} = \frac{\text{1+2+3+4+5+6+7 वर्ग आवृत्ति}}{\text{कुल आवृत्ति}} \times 100$

2. $\frac{\text{अप्रत्यक्ष शिक्षक कथन}}{\text{Indirect Teacher Talk ITT}} = \frac{\text{1+2+3+4 आवृत्ति}}{\text{कुल आवृत्तियाँ}} \times 100$

3. $\frac{\text{प्रत्यक्ष शिक्षक कथन}}{\text{Direct Teacher Talk ITT}} = \frac{\text{5+6+7 आवृत्ति}}{\text{कुल आवृत्तियाँ}} \times 100$

4. $\frac{\text{अप्रत्यक्ष-प्रत्यक्ष अनुपात}}{\text{Indirect-Direct Ratio IDR}} = \frac{\text{1+2+3+4}}{\text{5+6+9 कुल आवृत्तियाँ}} \times 100$

5. $\frac{\text{छात्र कथन}}{\text{Pupil Talk}} = \frac{\text{8+9}}{\text{कुल आवृत्तियाँ}} \times 100$

6. $\frac{\text{मौन/विभ्रांति}}{\text{Silence/confusion}} = \frac{\text{10 वर्ग की आवृत्ति}}{\text{कुल आवृत्तियाँ}} \times 100$

7. $\frac{\text{छात्रस्वोपक्रम}}{\text{Pupil Initiation Ratio}} = \frac{\text{1+2+3}}{\text{1+2+3+6+9 आवृत्तियाँ}} \times 100$

8. $\frac{\text{शिक्षक प्रश्न अनुपात}}{\text{Teacher Question Ratio}} = \frac{4}{\text{4+5 आवृत्तियाँ}} \times 100$

9. $\frac{\text{शिक्षक प्रश्न अनुपात}}{\text{Teacher Question Ratio}} = \frac{4}{\text{4+5 आवृत्तियाँ}} \times 100$

10. $\frac{\text{पाठ्य-वस्तु अवातर अनुपात}}{\text{Content Cross Ratio}} = \frac{2(4+5)-5(4-4)+(5+5)+(5-4)+(4-5)}{\text{कुल आवृत्तियां}} \times 100$

C C R

11. $\frac{\text{स्थिर अवस्था अनुपात}}{\text{Steady State Ration}} = \frac{\text{दसों स्थिर कक्षाओं का योग}}{\text{कुल आवृत्तियां}} \times 100$

S S R

12. $\frac{\text{छात्र स्थिर अवस्था अनुपात}}{\text{Pupil Steady State Ratio}} = \frac{(8\text{-}8) + (9\text{-}9)\ \text{कक्षिका}}{\text{कुल आवृत्तियां}} \times 100$

P S S R

13. $\frac{\text{तत्कालीन शिक्षक अनुक्रिया अनुपात}}{\text{Instantaneous Teacher Response Ratio}} = \frac{\text{TTR 89}}{\text{कुल आवृत्तियां}} \times 100$

I T R R

14. $\frac{\text{तात्कालीन शिक्षक प्रश्न अनुपात}}{\text{Instantaneous Teacher Question Ratio}} = \frac{(8\text{-}4) + (9\text{-}4)\ \text{आवृत्तियां}}{(8\text{-}4) + (8\text{-}5) + (a\text{-}4) + (a\text{-}5)} \times 100$

15. $\frac{\text{विषम चक्र}}{\text{Vicious Circle}} = \frac{(6\text{-}6) + (6\text{-}9) + (9\text{-}6) + (a\text{-}a)}{\text{कुल आवृत्तियां}} \times 100$

V C

निरीक्षण के नियम :

1. जब यह स्पष्ट हो कि व्यवहार किस श्रेणी से सम्बंधित है तो पाँचवी श्रेणी से सबसे दूर वाली श्रेणी का क्रम नम्बर नोट करना चाहिये। यादि 2 और 3 नम्बर वाली श्रेणी मे निश्चय हो पाता है तो पाँचवी श्रेणी से 2 नम्बर वाली श्रेणी ही सबसे दूर पड़ती है। अतः 2 नम्बर वाली श्रेणी ही सबसे दूर पड़ती हैं। अतः 2 नबंर वाली श्रेणी ही रेकार्ड करना चाहिए। इसी प्रकार यदि 5 और 7 नम्बर श्रेणी में अस्पष्टता हो तो 7वीं श्रेणी ही नोट की जानी चाहिए। श्रेणी 8-9 में भ्रम होने पर श्रेणी 9 का ही अकंन करना चाहिये ।
2. यदि आध्यापक की वार्ता का रुझान लगातार प्रत्यक्ष या लगातार अप्रत्यक्ष है तो प्रेक्षण मे एकदम से श्रेणी में प्रेक्षक द्वारा परिवर्तन नही करना चाहिए। जब तक अध्यापक द्वारा श्रेणी परिवर्तन का स्पष्ट संकेत न मिलें।

NOTES

NOTES

3. निरीक्षक स्वयं अपना दृष्टिकोण प्रयोग न करे ।
4. 3 सेकंड मे यदि एक से अधिक श्रेणियाँ सक्रिय होती है तो सभी श्रेणियों को रेकार्ड किया जाये। यदि तीन सेकंड मे कोई श्रेणी परिवर्तन नही होता तो उसी श्रेणी नंबर को दोहराया जाना चाहिये।
5. यदि मौन 3 सेकंड से अधिक हो तो 10वीं श्रेणी रिकार्ड की जाये।
6. छात्र को अध्यापक द्वारा नाम से पुकारने पर चौथी (4th) श्रेणी रेकार्ड की जाये
7. यदि मौन 3 सेकंड से अधिक हो तो 10वीं श्रेणी रिकार्ड की जाये।
8. निरीक्षक स्वयं अपना दृष्टिकोण प्रयोग न करें।
9. यदि एक विद्यार्थी दूसरे विद्यार्थी की वार्ता के बाद अपनी वार्ता शुरू कर देता है। तो 9वीं और 8वीं श्रेणी के वीच श्रेणी 10 लिखी जाती है।
10. सब ठीक है हाँ ओ.के. आदि शब्दों का संबंध श्रेणी 2से है ।
11. निरीक्षण मे शब्दों की अपेक्षा परिस्थिति पर ज्यादा ध्यान दिया जाना चाहिए।
12. यदि अध्यापक किसी विद्यार्थी को निशाना बनायें बगैर कोई मजाक करता है तो यह श्रेणी 2 है और यादि किसी छात्र को लेकर उसका मजाक उड़ाता है तो इसका संबंध श्रेणी 7 से है।
13. यदि सभी विद्यार्थी एक छोटे से प्रश्न के उत्तर में सभी इकरठे बोल पडते हैं तो श्रेणी 8 रिकार्ड की जाती है

अवधारणाएँ :

1. शिक्षक के व्यवहारों से छात्र प्रभावित होता है।
2. शिक्षक का कक्षा का व्यवहार छात्रों को अधिक प्रभावित करता है। छात्र व्यवहार शिक्षकों के व्यवहार से प्रभावित होता है।
3. शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक छात्रों का संबंध महत्वपूर्ण होता है।
4. शिक्षक का जनतत्रांत्मक व्यवहार अधिक पसंद किया जाता है।
6 शिक्षक के व्यवहार का कक्षा मे निरीक्षण, अंकन तथा मापन वस्तुनिष्ठ रूप मे किया जाता है।

7 शिक्षण मे कक्षा का वातावरण भी महत्वपूर्ण होता है।

8 शिक्षक का व्यवहार पृष्ठ-पोषण के प्रयोग से सुधारा जा सकता है।

9 कक्षा मे शाब्दिक व्यवहार का प्रयोग अधिक किया जाता है। शाब्दिक व्यवहार कक्षा के सम्पूर्ण व्यवहार का प्रतिनिधित्व करता है।

NOTES

विशेषताएँ:

1 कक्षा मे यह विधि शिक्षक के व्यवहार का वस्तुनिष्ठ ढ़ग से निरीक्षण करती है।

2 इसमें पृष्ठ-पोषण की व्यवस्था होती है।

3 कक्षा-शिक्षण के मूल्यांकन की यह विश्वसनीय विधि है।

4 सूक्ष्म शिक्षण मे इसका प्रयोग सहायक प्रविधि के रूप मे किया जाता है।

5 विभिन्न शोंध कार्यों में यह वहुत लाभकारी सिद्ध हुयी है।

6 यह सूक्ष्म से सूक्ष्म कक्षा व्यवहार का निरीक्षण करने मे समर्थ है।

7 यह वैज्ञानिक तथा वस्तुनिष्ठ विधि है।

8 कृत्रिम वातावरण मे भी इसका प्रयोग सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

9 शिक्षण तथा शिक्षक दोनो मे सुधार यह विधि लाती है।

सीमाएँ :

1 इस विधि से केवल कक्षा मे शाब्दिक व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है। अशाब्दिक व्यवहारो का नही।

2 इस विधि मे पाठ्यक्रम पाठ्य वस्तु तथा शिक्षण बिन्दुओं या प्रकरण पर किसी भी प्रकार का ध्यान नही दिया जाता है।

3 यह विधि कक्षा-व्यवहारों का मात्र 10 श्रेणियों मे अध्ययन करती है। जिससे व्यवहार काफी परिसीमित हो जाते है।

4 इस विधि में छात्र कथन की और बहुत कम ध्यान दिया जाता है। और शिक्षक कथन की ओर अधिक यह उचित नही है।

5 इसमें प्रशिक्षित निरीक्षको की आवश्यकता होती है।

6 इस प्रणाली के प्रयोग मे बहुत समय तथा शक्ति लगती है।

NOTES

संशोधन : फ्लैण्डर की अन्तःक्रिया विश्लेषण विधि की सीमाओं को ध्यान में रखाकर ओवर ने सन् 1968 मे 'पारस्परिक वर्ग पद्धति' कोगन ने सन् 1965 में एक नयी पद्धति हफ एवं रमीडोव ने सन् 1966 में तथा चार्ल्स एम0ग्लोब ने सन् 1969 में इस विधि मे अपने-अपने संशोधन प्रस्तुत किये।

सूक्ष्म शिक्षण :

सूक्ष्म-शिक्षण, अध्यापन प्रशिक्षण के क्षेत्र मे एक नवीन आशा और उत्साह का प्रतीक बनकर शिक्षकों को छात्राध्यापकों को और शिक्षक-प्रशिक्षकों को आज चुनौती भरे स्वरों मे पुकार रहा है।

इतिहास :

सूक्ष्म-शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र में एक नवीन नियंत्रित अभ्यास की प्रक्रिया है। इसका विकास स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी में किया गया। सन् 1961 मे एचीसन बुश तथा एलन ने सर्वप्रथम नियंत्रित रूप मे संकुचित-अध्ययन-अभ्यास क्रम प्रारंभ किये, जिनके अंर्तगत प्रत्येक छात्राध्यापक 5 से 10 छात्रों को एक छोटा सा पाठ पढाता था। और अन्य छात्राध्यापक विभिन्न प्रकार की भूमिका निर्वाह करते थे।

परिभाषाए :

वी.एम.शोर : सूक्ष्म शिक्षण कम समय, कम छात्रों तथा कम शिक्षण क्रियाओं वाली प्रविधि है।

डी.डब्लयू. एलन : सूक्ष्म शिक्षण सरलीकृत शिक्षण प्रक्रिया है जो छोटे आकार की कक्षा मे कम समय में पूर्ण होती है।

क्लिफ्ट एवं उनके सहयोगी : सूक्ष्म शिक्षण प्रशिक्षण की वह विधि है जो कि शिक्षण अभ्यास को किसी कौशल विशेष तक सीमित करके तथा कक्षा के आकार एवं शिक्षण अवधि को घटाकर शिक्षण को अधिक सरल एवं नियंत्रित करती है।

प्रो.बी.के. वासी : सूक्ष्म शिक्षण एक प्रशिक्षण विधि है। जिसमे छात्राध्यापक किसी एक कौशल का प्रयोग करते हुये थोडी अवधि के लिये छोटे छात्र समूह को कोई एक सम्प्रव्यय पढाता है।

एल.सी.सिंह : सूक्ष्म शिक्षण, शिक्षण का सरलीकृत रूप है।

NOTES

सूक्ष्म-शिक्षण की मूलभूत मान्यतायें :

1 प्रभावशाली सूक्ष्म-शिक्षण के लिए शिक्षक-व्यवहार के प्रारूप आवश्यक होते है।

2 अपेक्षित व्यवहार मे परिवर्तन लाने मे पृष्ठ पोषण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

3 शिक्षण एक उपचारात्मक प्रक्रिया या योजना होती है।

4 उत्तम प्रशिक्षण देने के लिये शिक्षण-क्रियाओं का वस्तुनिष्ठ प्रेक्षण आवश्यक है।

5 शिक्षक मे सुधार लाने के लिये समुचित अवसर दिये जाने चाहिये।

6 व्यक्तिगत क्षमताओं का विकास करके शिक्षण प्रक्रिया को उन्नत बनाया जा सकता है।

7 सूक्ष्म शिक्षण, शिक्षण का एक अति लधु एवं सरलीकृत रूप होता है।

सूक्ष्म शिक्षण के सिद्धांत :

एलन व रियाँन के अनुसार

1 सूक्ष्म शिक्षण वास्तविक शिक्षण है।

2 किंतु इस प्रकार के शिक्षण मे साधारण कक्षा शिक्षण की जटिलताओं को कम कर दिया जाता है।

3 एक समय में किसी भी एक विशेष कार्य एवं कौशल के प्रशिक्षण पर ही नोट दिया जाता है।

4 अभ्यास क्रम की प्रक्रिया पर अधिक नियंत्रण रखा जाता है।

5 परिणाम संबंधी साधारण ज्ञान एवं प्रतिपुष्टि के प्रभाव की परिधि विकसित होती है।

सूक्ष्म-शिक्षण चक्र

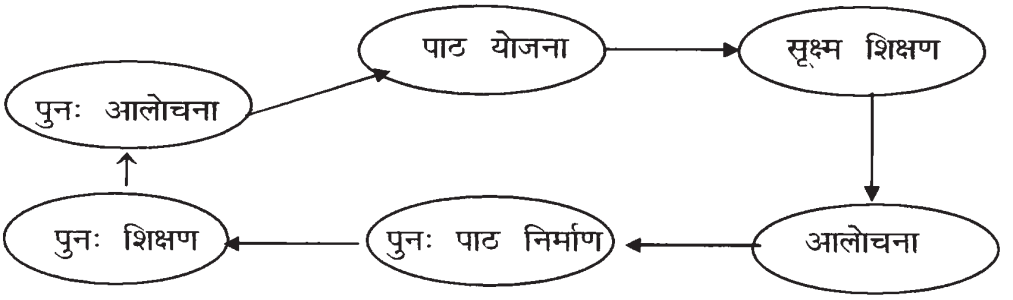

NOTES

शिक्षण, पृष्ठ-पोषण, पुनः पाठ नियोजन, पुनः शिक्षण तथा पुनः पृष्ठ-पोषण के पाँचो पदक्रमों को मिलाकर एक चक्र सा बन जाता है। जो तब तक चलता रहता है। जब तक उसे शिक्षण कौशल विशेष पर पूर्ण निपुणता न प्राप्त हो जाये। यही चक्र सूक्ष्म शिक्षण चक्र कहलाता है।

शैक्षिक प्रक्रिया :

सूक्ष्म-शिक्षण के अंर्तगत विषय-वस्तु कक्षा एवं अवधि तीनो को ही कम करके सूक्ष्म बनाया जाता है।

1 शिक्षक, छात्राध्यापकों को सूक्ष्म शिक्षण के विषय मे सैद्धंतिक तथा व्यवहारिक ज्ञान प्रदान करता है। इसे 'प्रस्तावना पद' कहते है।

2 शिक्षक छात्राध्यापकों को शिक्षण कौशल (Teaching Skill) जिसका विकास करना है के विषय मे विशद रूप से बताता है। और उसके पीछे छिपे मनोवैज्ञानिक आधारों की विवेचना करता है।

3 शिक्षक छात्राध्यापकों के समझ सूक्ष्म-शिक्षण विधि पर आधारित 'आदर्श पाठ' प्रस्तुत करता है।

4 शिक्षक और छात्राध्यापक मिलकर दिये गये आदर्श पाठ का विश्लेषण कर इसकी कमियों और विशेषताओं पर विचार-विमर्श करते है। और शिक्षण-कौशल व्यवहारों का निर्धारण करते है

5 शिक्षक कक्षाध्यापकों को 'सूक्ष्म पाठ योजना' बनाने के लिये समय देता है और आवश्यकतानुसार व्यक्तिगत रूप से उनकी सहायता करता है।

6 6 कक्षाध्यापक निर्देशानुसार 5 से 15 मिनट तक सूक्ष्म पाठ पढाता है। इसे शिक्षण पद कहा जाता है।

7 कक्षाध्यापक 'सूक्ष्म' पाठ पढ़ाने के पश्चात् शिक्षक के साथ अपने पढ़ाये गये पाठ पर विस्तृत रूप से चर्चा करता है। इस समय छात्र-अध्यापक की 'अध्ययन कौशल' की कमियों, अच्छाईयों अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के बिंदुओं पर वार्तालाप किया जाता है। अतः छात्राध्यापक को पाठ-पुनः निर्माण के लिये सुझाव दिये जाते है। इसे आलोचना/मूल्यांकन पद कहा जाता है।

8 आलोचना पद पश्चात् छात्राध्यापक अपनी पाठ योजना में दिये गये सुझावों के अनुसार परिवर्तन करता है। और पुनः पढ़ाने के लिये इसमें आवश्यक संशोधन करता है। इसे पुनः पाठ योजना-निर्माण पद कहा जाता है।

NOTES

9 इस प्रकार से पुनः निर्मित पाठ योजना को छात्राध्यापक उसी कक्षा के अन्य छात्रों को पढ़ाता है। यह शिक्षण भी टेप-रेकार्डर द्वारा आलेखित किया जाता है। शिक्षण के इस क्रम को पुनः शिक्षण क्रम कहा जाता है।

10 पुनः शिक्षण-क्रम के पश्चात् फिर पुनः आलोचना पद आता है।

सूक्ष्म-शिक्षण मे प्रयुक्त प्रविधियाँ :

सूक्ष्म शिक्षण का विकास स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय मे हुआ था। वहाँ पर निम्नांकित प्रविधि प्रयोग की गयी थी।

शिक्षण चरण	5 मिनट
मूल्यांकन चरण	10 मिनट
पुनः पाठ निर्माण चरण	15 मिनट
पुनः शिक्षण चरण	5 मिनट
पुनः मूल्यांकन चरण	10 मिनट
कुल समय	**45 मिनट**

डी.ए.वी. कालेज, देहरादून मे कई प्रयोगों के पश्चात् निम्नांकित प्रविधि मिश्रा, गोस्वामी तथा कुलश्रेष्ठ ने अपनायी और इसे अधिक उपादेय पाया।

शिक्षण चरण	6 मिनट
प्रथम मूल्यांकन चरण	6 मिनट
द्वितीय मूल्याकंन चरण	4 मिनट
पुनः पाठ निर्माण चरण	7 मिनट
पुनः शिक्षण चरण	6 मिनट
पुनः मूल्यांकन चरण	6 मिनट
कुल समय	**35 मिनट**

सूक्ष्म शिक्षण के लाभ :

1. सूक्ष्म-शिक्षण से शिक्षण प्रक्रिया सरल होती है।

NOTES

2. छात्राध्यापक क्रमशः अपनी योग्यतानुसार शिक्षण-कौशलों पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हुए उन्हें विकसित करता है। और सीखने का प्रयत्न करता है।
3. प्रतिपुष्टि सम्पूर्ण तथा सभी दृष्टिकोणों को अंगीकार करती है।
4. छात्राध्यापक का वस्तुनिष्ठ मूल्याकंन किया जाता है।
5. मूल्यांकन मे छात्राध्यापक को अपना पक्ष रखने का पूर्ण अधिकार होता है और मूल्यांकन चरण मे उसे सक्रिय रखा जाता है।
6. निरीक्षक छात्राध्यापक के परामर्शदाता के रूप मे कार्य करता है।
7. यह कक्षा शिक्षण की जटिलताओं को कम करता है।
8. यह विधि छात्राध्यापकों मे आत्मविश्वास जागृत करती है।
9. यह शिक्षण विधि छात्राध्यापक को कम समय में अधिक सिखाती है।

सीमाएँ :

सूक्ष्म-शिक्षण यद्यपि प्रशिक्षण विधि के रूप में अपने अदंर अनेक अच्छे बिदुंओ को समेटे हुए है। फिर भी इस विधि की अपनी सीमाएँ है।

1. यह सीमा से ज्यादा नियंत्रित तथा संकुचित शिक्षण की ओर ले जाती है।
2. यह शिक्षण को कक्षा-कक्षागत शिक्षण से दूर ले जाती है।
3. एक समय मे एक ही शिक्षण-कौशल का विकास करती है। फलस्वरूप बाद में उनमें एकीकरण करना कठिन होने लगता है।
4. इसमे समय अधिक लगता है।
5. इसमें प्रतिपुष्टि एकदम छात्राध्यापक को मिलना मुश्किल होता है।
6. छात्राध्यापक के शिक्षण कौशल दक्षता प्राप्त करने के लिये उचित प्रेरणा का अभाव रहता है।
7. यह शिक्षण Diagnostic तथा Renedial Work पर ध्यान नहीं देता।

शिक्षक व्यावहार का सुधार :

अध्यापक शिक्षा संस्थाओं को प्रमुख कार्य प्रभावशाली शिक्षक तैयार करना है। परंतु स्वतंत्रता के बाद से भारत मे अधिक संख्या मे इन संस्थाओं की स्थापना हुई है। परंतु शिक्षण का स्तर गिरता गया है।

इसके प्रमुख दो कारण है

1 छात्राध्यापक के चयन का मानदंड उपयुक्त नही है। ऐसे छात्रों को प्रवेश मिल जाता है। जिनका शिक्षण के प्रति लगाव तथा रूचि नही होती है।

2 अध्यापक शिक्षा संस्थाओं के शिक्षण-अभ्यास की पद्धतियाँ दोषपूर्ण है। वे शिक्षण-कौशल के विकास के लिये उपयुक्त नहीं है।

NOTES

मनोवैज्ञानिकों तथा शिक्षा शास्त्रियों ने इन समस्याओं का समाधान करने का प्रयास किया जाता है।

शिक्षक-व्यवहार मे सुधार के लिये अनेक पृष्ठपोषण की प्रविधियाँ का प्रयोग किया जाने लगा है। उनमें से प्रमुख प्रविधियाँ निम्नाकिंत है।

1 सूक्ष्म-शिक्षण

2 अनुकरणीय शिक्षण

3 अन्तःप्रक्रिया विश्लेषण

4 प्रशिक्षण समूह

5 अभिक्रमित अनुदेशन

1. सूक्ष्म शिक्षण :

सूक्ष्म शिक्षण का अध्ययन विस्तारपूर्वक पूर्व अध्याय मे किया जा चुका है।

2. अनुकरणीय प्रशिक्षण प्रविधि :

अध्यापक शिक्षा संस्थाओं में शिक्षण अभ्यास से पूर्व पाठ-प्रदर्शन की परम्परा है। छात्राध्यापको के एक या दो पाठों का प्रदर्शन किया जाता है। और उन्हें कक्षा शिक्षण के लिये भेज दिया जाता है। छात्राध्यापक पाठ-प्रदर्शन का ही अनुकरण करने का प्रयास करते है। और अपनी मौलिक क्षमताओं का प्रयोग नही कर पाते हैं। इसी पूर्व अभ्यास को अनुकरणीय शिक्षण कहते है।

अवधारणायें :

इस प्रविधि का विकास संयुक्त राज्य अमेरिका के कोलंबिया विश्वविद्यालय मे हुआ है। इसका विकास क्रुक शैन्क 1968 ने अध्यापक प्रशिक्षण प्रणाली के लिये किया था। इस प्रविधि की प्रमुख अवधारणा यह है कि प्रभावशाली-शिक्षक के लिये शिक्षक व्यवहार के कुछ प्रारूप अवश्य होते हैं।

NOTES

अनुकरणीय शिक्षण का स्वरूप : कक्षा शिक्षण अभ्यास से पूर्व अनुकरणी-शिक्षण का अभ्यास कराया जाता है। छात्राध्यापक इसके अभ्यास में शिक्षक तथा छात्र दोनों का कार्य करते है। शिक्षक कालाशं दस या पन्द्रह मिनट का होता है।

प्रथम सोपान : इसमें छात्राध्यापकों को शिक्षक के पद का कार्य एक क्रम में सौंपा जाता है। और शेष अवसरों पर छात्र तथा निरीक्षक का कार्य सौंपा जाता है।

द्वितीय सोपान : इसमे उस शिक्षण कौशल को निर्धारित किया जाता है। जिसका अभ्यास करना और विकास के लिये सुझाव दिये जाते है। छात्राध्यापक अपने शिक्षण के प्रकरण का चयन करते है। और पाठ का नियोजन करते हैं।

तृतीय सोपान : इसमें शिक्षण के आरंभ करने तथा अंत करने के लिये कार्यक्रम की रूपरेखा निश्चित की जाती है।

चतुर्थ सोपान : इसमें शिक्षक व्यवहार की क्रियाओं के मापन की विधियों को निश्चित किया जाता है।

पंचम् सोपान : इसमें अनुकरणीय शिक्षण SSST का अभ्यास किया जाता है और उन्हे पृष्ठ-पोषण दिया जाता है। आवश्यकता पड़ने पर अभ्यास की विधि को दूसरे सूत्र में बदल लिया जाता है।

षष्टम् सोपान : इसमे शिक्षण की विधियों को बदल लिया जाता है जिससे शिक्षण के आगामी कौशल का अभ्यास किया जा सके। परिवर्तन आवश्यक समझा जाता है जिससे छात्राध्यापक की शिक्षण के प्रति रूचि बनी रहे।

शिक्षक व्यवहार का वर्गीकरण :

कार्ल ओपिनशाह तथा अन्य व्यक्तियों ने ओहियो विश्वविद्यालय ने शिक्षक व्यवहार के विकास का चढ़ावा क्रम का वर्गीकरण विकसित किया। जिससे शिक्षक व्यवहार का व्यवहारिक तथा व्यापक स्वरूप प्रकट होता है।

इसके अंर्तगत चार स्तरों मे विभाजन किया है।

1 **स्त्रोत स्तर** : इसे अभिप्रेरणा का स्त्रोत भी कहते हैं।

2 **दिशा स्तरः** इसके अर्तगत अपेक्षित व्यवहारी का स्वरूप होता है।

3 **कार्य स्तरः** इसमें व्यवहारो के स्वरूप की सार्थकता देखाते है।

4 **संकेत स्तर** : अंतिम स्तर पर सम्प्रेषण का स्वरूप भी सुनिश्चित करते है।

अनुकरणीय प्रशिक्षण के तत्व/भूमिकाएँ :

अनुकरणीय प्रशिक्षण की प्रक्रिया में अभ्यार्थी को तीन प्रकार की भूमिकाओं का निर्वाह करना होता है।

NOTES

1. शिक्षक की भूमिका
2. छात्र की भूमिका
3. निरीक्षण की भूमिका

ब्रुक शैन्क ने इन भूमिकाओं को शिक्षण प्रारूप मे तीन तत्वों को महत्व दिया।

1. प्रस्तुतीकरण :

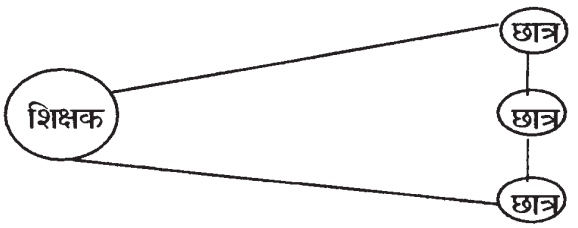

2. निदान

निरीक्षक → 3. मूल्यांकन

इस आकृति से स्पष्ट होता है कि इस प्रशिक्षण मे अध्यापक को शिक्षक, छात्र तथा निरीक्षक की भूमिकायें करनी होती है। शिक्षक की भूमिका मे पाठ्यवस्तु का प्रस्तुतीकरण करता है। उन्हें छात्रों की सम्पूर्ण भूमिका में शिक्षण का निदान करना होता है। निरीक्षक की भूमिका में सम्पूर्ण शिक्षण क्रियाओं तथा कौशलों का मूल्यांकन करना होता है। शिक्षण के अंत मे वाद-विवाद किया जाता है।

अनुकरणीय शिक्षा की विशेषताएँ :

1. अध्यापक-शिक्षा मे छात्रों के लिये अधिक उपयोगी है। इसमे अपनी शिक्षण कौशल का मौलिक विकास कर सकते है। यदि माँडल पाठ के स्थान पर अनुकरणीय शिक्षण को प्रयुक्त किया जाये तो अधिक प्रभावशाली होता है।
2. इसको अनुसंधान की एक प्रविधि के रूप में प्रयोग किया जाता है।
3. छात्राध्यापकों को कक्षा मे भेजने से पहले शिक्षण के लिये पूर्व अभ्यास के लिये अवसर दिये जाते है। इस प्रविधि से सामान्य व्यवहार की जानकारी तथा कौशल का विकास किया जाता है।
4. इस प्रविधि की सहायता से छात्राध्यापकों को प्रभावशाली ढ़ग से पृष्ठ-पोषण दिया जाता है।

NOTES

कक्षा अन्तः प्रक्रिया विश्लेषण :

डी.जी. रायन के शिक्षक व्यवहार के सिद्धांत की स्वतः सिद्ध परिकल्पना यह भी है कि शिक्षक-व्यवहार का मापन किया जा सकता है। शिक्षक व्यवहार के मापन की प्रविधियों को अन्तःप्रक्रिया-विश्लेषण प्रणाली कहते है।

अन्तः प्रक्रिया विश्लेषण एक पृष्ठपोषण की प्रविधि के रूप मे :

शिक्षक व्यवहार के सुधार के लिये फ्लैण्डर्स की कक्षा अन्तः प्रक्रिया विश्लेषण प्रविधि का प्रयोग पृष्ठ-पोषण प्रविधि के रूप मे भी किया जाता है इस प्रविधि का पृष्ठ-पोषण के रूप मे उपयोग करने के लिये छात्राध्यापकों को इसकी पूरी जानकारी होनी चाहिये उन्हें वर्गो को याद करना चाहिये और कक्षा व्यवहार के निरीक्षण मे इस प्रविधि के प्रयुक्त करके आलेख तैयार करना चाहिये आलेख की सहायता से आत्यूह तालिका बनाकर व्यवहार चरो तथा व्यवहार-प्रवाह की व्याख्या करने का अभ्यास कराना चाहिये। प्रभावशाली शिक्षण के व्यवहार चरों तथा व्यवहार-प्रवाह की भी जानकारी देना चाहिये। छात्राध्यापकों को इन क्रियाओं का ज्ञान तथा इनके प्रयोग की क्षमताओं को विकास के बाद उनके कक्षा शिक्षण का निरीक्षण इसी प्रविधि की सहायता से करना चाहिये। अपने कक्षा व्यवहार के लिये आव्यूह तालिका बनाकर व्यवहार चरों का तथा प्रवाह की गणना करके वे उनकी व्याख्या की स्वयं करे। ऐसा करने मे छात्राध्यापक को अपने शिक्षण व्यवहार की अनुभूति करना होता है। जिससे प्रभावशाली शिक्षण के लिये व्यवहारों का बोध कराया जाता है। एवं प्रशंसा की जाती है, सुधार के लिये सुझाव दिये जाते है। ये क्रियायें पृष्ठ-पोषण का कार्य करती है।

प्रशिक्षण समूह प्रविधि :

प्रशिक्षण-समूह प्रविधि व्यक्तियों को अपने व्यवहार को समझने का अवसर प्रदान करती है।

अनुभवी प्रशिक्षक होते है। यह समूह बिना किसी आयोजन के मिलता है और इसकी सभा 2 से 3 घंटे तक चलती है। इस प्रकार की सभायें सप्ताह में एक या दो बार होती है।

सभाओं मे वाद-विवाद का विषय परिस्थितियों से उत्पन्न होता है। पहले से कुछ भी निश्चित नही किया जाता है सदस्यों से यह आशा की जाती है कि वे प्रशिक्षण सम्बंधी समस्यों पर वार्ता आरंभ करें।

NOTES

इन सभाओं मे प्रशिक्षणार्थी को अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिये प्रोत्साहित किया जाता है। प्रशिक्षण समूह की भावनाओं मे लगातार भाग लेने से सदस्य अपने प्रत्यक्षीकरण में ईमानदार, स्पष्ट, अतंदृष्टि युक्त तथा चितंनशील हो जाते है।

प्रशिक्षण समूह का प्रयोग :

अध्यापक-शिक्षा मे शिक्षण-अभ्यास के लिये प्रशिक्षण समूह का प्रयोग किया जाता है। और क्रियाओं मे उसी क्रम का अनुसरण किया जाता है। शिक्षण अभ्यास मे पर्यवेक्षक को छात्राध्यापकों की चितंन तथा अपने व्यवहार की अर्न्तदृष्टि के लिये निर्देशन देना चाहिये जिससे छात्राध्यापक अपने कक्षा-शिक्षण व्यवहार को समझ सके और उसके सुधार के लिये सूझ का विकास कर सके। चूंकि प्रशिक्षण-समूह का अनुभव छात्राध्यापक के व्यवहार मे सुधार के लिये पर्याप्त नही है सकता है। अतः अन्य पृष्ठ पोषण की प्रविधियों को भी प्रयुक्त करना चाहिये।

छात्राध्यापक जब स्वयं किन्हीं विचारों को स्वीकार करता है। तभी वह उन्हें अपने व्यवहार मे अपनाता है। इसका प्रयोग विशेष रूप से मानव संबंधो के लिये किया जाता है।

प्रशिक्षण-समूह से छात्राध्यापकों मे निम्नलिखित गुणों का विकास होता है।

1 वे अपनी अनुभूति तथा दूसरों के व्यवहार में लचीलापन के प्रति संवेदनशील हो जाते है।

2 उनके व्यवहार मे लचीलापन आ जाता है जो प्रभावशाली शिक्षण के लिये शिक्षक व्यवहार की प्रमुख विशेषता मानी जाती है।

3 प्रशिक्षण समूह के निर्णयों के प्रति भी छात्रा संवेदनशील हो जाते है

4 छात्राध्यापकों के निदानात्मक क्षमताओं का विकास होता है, जिससे वे अपने स्वयं को व्यवहार को समझ सकते हैं और कमजोरियों का सुधार कर सकते हैं।

NOTES

अभिक्रमित अनुदेशन :

अभिक्रमित-अनुदेशन का विकास बी.एफ. स्किनर ने 1954 में हारबर्ड विश्वविद्यालय की मनोविज्ञान की प्रयोगशाला मे किया था। इनका शोध पत्र अधिगम का विज्ञान और शिक्षण कला में प्रकाशित हुआ था। इसका विकास एक अधिगम की प्रविधि के रूप मे हुआ है। यह सक्रिय अनुबद्ध अधिगम सिद्धांतो पर आधारित है। यह स्किनर के शिक्षण प्रतिमान का एक व्यवहारिक रूप है। इसको कई नामों से सम्बोधित किया जाता है। व्यक्तिगत अनुदेशन तथा अभिक्रमित-अनुदेशन आदि।

''अभिक्रमित अधिगम'' व्यक्तिगत-अनुदेशन की विधि है। जिसमें छात्र सक्रिय रहकर अपनी गति से सीखता है। और 3 से तत्काल ज्ञान मिलता है और शिक्षक की आवश्यकता नही होती है।

अभिक्रमित अनुदेशन के आधार भूत सिद्धांत :

यह सक्रिय अनुबंद्ध अनुक्रिया सिद्धांत पर आधारित है।

1. छोटे पदों का सिद्धांत : इसमें पाठयवस्तु को छोटे-छोटे पदों में क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाता है। जिससे छात्र अधिक सीखते है।

2. तत्पर अनुक्रिया का सिद्धांतः छोटे पदो मे रिक्त स्थान छोड़ दिये जाते है। उनका पूरा करने के लिये छात्रों को तत्पर होकर अनुक्रिया करनी होती है।

3. तत्कालीन जाँच का सिद्धांत : छात्रों की अनुक्रियाओं के साथ-साथ छात्र को पुष्टि करनी होती है। जिससे पुनर्बलन मिलता है।

4. स्वतः अध्ययन गति का सिद्धांत : प्रत्येक छात्र अपने अध्ययन गति एवं योग्यताओं के अनुसार पदों को पढ़ता है और सीखता है।

5. छात्र आलेख का सिद्धांत : छात्र अध्ययन करते समय अपने सीखने का आलेख तैयार करता है।

अवधारणाएँ :

1. छात्र अध्ययन के समय अनुक्रिया करने से अधिक सीखता है।
2. अध्ययन की त्रुटि सीखने मे बाधक होती है।

3. पाठ्य-वस्तु को छोटे पदों को क्रमबद्ध रूप में रखने से अधिगम अधिक होता है।

4. अध्ययन के समय निरंतर पुनर्बलन देने से अधिगम प्रभावशाली होता है।

5. छात्रों को उनकी योग्यताओं के अनुसार अवसर देने का अधिगम प्रभावशाली होता है।

NOTES

अग्रिम संगठक प्रतिमान

अग्रिम संगठक प्रतिमान के प्रवर्तक डेविड आसुबेल थे। इस प्रतिमान का आधार शाब्दिक अधिगम है तथा यह सूचना प्रक्रिया के सिद्धांत पर आधारित है। डेविड आसुबेल, ब्रूनर की बौद्धिक अनुशासन सम्प्रत्यय से काफी प्रभावित हुआ है।

प्रमुख तत्वः

1. उद्देश्यः

1 प्रत्ययो तथा तथ्यों का बोध कराना।

2 ज्ञान-पुंज में संबंध स्थापित कराना।

3 पाठ्य-वस्तु को रोचक एवं सार्थक बनाना।

2 संरचना :

संरचना मे विषय-वस्तु के सार्थक बोध हेतु पहले क्रियाओं को सामान्य रूप से प्रस्तुत किया जाता है। फिर विषय-वस्तु को सीखने के क्रम मे विशिष्ट रूप से प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रतिमान में तीन मुख्य अवस्थाये होती हैं।

(क) अग्रिम संगठन का प्रस्तुतीकरण :

1 पाठ के उद्देश्यों को स्पष्ट किया जाता है।

2 सगंठन का प्रस्तुतीकरण किया जाता है। इस हेतु

(क) इसमें चरों की परिभाषायें चिन्हित की जाती है।

(ख) उदाहरण पेश किये जाते है।

(ग) संदर्भ प्रस्तुत किये जाते हैं तथा आवश्यकतानुसार पुनरावृत्ति भी की जाती है।

(ख) अधिगम सामग्री प्रस्तुतीकरण :

1 संगठन का पूर्ण स्पष्टीकरण किया जाता है।

NOTES

2 अधिगम सामग्री के तार्किक क्रम की व्याख्या की जाती है। जिससे कि कोई शंका न रह जाये।

3 एकाग्रचित्त से ध्यान रखना तथा एकाग्रता बनाये रखना।

4 अधिगम सामग्री प्रस्तुत करना।

(ग) ज्ञानात्मक संगठन को सुदृढ़ करना :

1 अधिगम ग्रहण करने में छात्रों को सक्रिय बनाना।

2 विषया-वस्तु के जटिल उपागम सरल व सहज बनाना तथा स्पष्ट करना।

3. सामाजिक व्यवस्था :

जैसा कि पूर्व मे कहा गया है यह प्रतिमान इस बात मे विश्वास रखता है कि अमूर्त विचारों को भी प्रभावशाली ढ़ग से प्रस्तुत किया जा सकता है। इसमें शिक्षक की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण होती है। वह ज्यादा सक्रिय होता है।

4. मूल्यांकन व्यवस्था :

इस प्रतिमान के अंतगर्त मूल्यांकन अनुदेशन के आधार पर किया जाता है। मूल्यांकन हेतु मौखिक तथा लिखित दोनों प्रकार की परीक्षाओं का प्रयोग किया जाता है।

आधुनिक शिक्षण प्रतिमान :

ब्रुस आर. जॉयस ने सभी शिक्षण प्रतिमानों को 'आधुनिक शिक्षण प्रतिमान' शीर्षक के अन्तगर्त निम्नलिखित चार वर्गों मे बाँटा है।

1. सामाजिक अन्तः प्रक्रिया स्त्रोत पर आधारित प्रतिमान :

सामाजिक अन्तःप्रक्रिया स्त्रोत पर आधारित प्रतिमानो में मानव के सामाजिक पक्ष को दृष्टि मे रखते हुए उसके सामाजिक विकास पर बल दिया जाता है। चूंकि मानव स्वभाव अपने सामाजिक संबधों पर अधिक बल देता है। इसलिये इसका विश्लेषण इस प्रकार के शिक्षण प्रतिमानो के अर्न्तगत किया जाता है। सामाजिक अन्तः प्रक्रिया स्त्रोत मे अग्रलिखित चार प्रकार के प्रतिमान पाये जाते है।

1. सामूहिक अन्वेषण प्रतिमान
2. जूरिस पुटेसंल प्रतिमान
3. सामाजिक पृच्छा प्रतिमान

4. प्रयोगशाला विधि प्रतिमान

2. सूचना प्रक्रिया स्त्रोत पर आधारित प्रतिमान :

NOTES

सूचना प्रक्रिया स्त्रोतों मे विद्यार्थी को तथ्यों का ज्ञान तथा आवश्यक सूचनायें दी जाती हैं। इनमे समस्या का समाधान तथा प्रत्ययों का बोध उद्दीपन एवं प्रभावपूर्ण वातावरण का निर्माण करके दिया जाता है। ये प्रतिमान विद्यार्थियों की बौद्धिक क्षमताओं को विकसित करने के लिये अधिक लाभप्रद सिद्ध हुइ है। इनके निम्नलिखित छः प्रकार होते है।

1. निष्पत्ति प्रत्यय प्रतिमान
2. आगमन प्रतिमान
3. पृच्छा प्रशिक्षण प्रतिमान
4. जैविक विज्ञान पृच्छा प्रतिमान
5. प्रगत संगठनात्मक प्रतिमान
6. विकासत्मक प्रतिमान

3. व्यक्तिगत स्त्रोत पर आधारित प्रतिमान :

व्यक्तिगत स्त्रोत पर आधारित प्रतिमानों के द्वारा व्यक्तिगत विकास को विशेष महत्व दिया जाता है। ऐसे प्रतिमानों में विद्यार्थी के भावात्मक पक्ष को विकसित करके उसकी यांत्रिक एवं बाध्य शाक्तियों के विकास हेतु बल दिया जाता है। जिससे उसमें आत्म कल्पना तथा आत्म बोध का विकास होता है।

1. दिशाविहीन शिक्षण प्रतिमान
2. कक्षा सभा प्रतिमान
3. सर्जनात्मक शिक्षण प्रतिमान
4. जागरुकता प्रतिमान
5. प्रत्यय-व्यवस्था प्रतिमान

4. व्यवहार परिवर्तन स्त्रोत पर आधारित प्रतिमान :

ऐसे प्रतिमानों मे विद्यार्थियों के व्यवहार सीखने की क्रिया तथा समुचित पुनबर्लन की सहायता से वांछित परिवर्तन लाये जाने पर अधिक बल दिया जाता है।

NOTES

शिक्षण मशीन :

शिक्षण मशीन का विकास सर्वप्रथम ओहियो विश्वविद्यालय के प्रो.एल.एल. प्रेसे ने किया था। उन्होनें कई प्रकार की शिक्षण व परीक्षण मशीनों का विकास किया। वैसे मौलिक रूप से बी.एफ.स्किनर ने अनुदेशन के प्रस्तुतीकरण के लिये शिक्षण मशीन का विकास किया था। प्रेसे प्राथमिक रूप से स्वः परीक्षण यंत्र में रुचि रखता था। लेकिन शीध्र ही उसमे महसूस किया कि विद्यार्थी भी उसकी मशीन पर परीक्षण द्वारा सीख सकते है। प्रैसे और उसके विद्यार्थियों ने कई लेख प्रकाशित किये जिनमें मशीनों को विभिन्न प्रारूपों के विवरण दिये गये तथा उनका मूल्यांकन किया गया है।

मूलरूप से प्रैसे ने जो मशीन बनाई उसमें उसने बहु रूचि पदों की पद्धति का अनुकरण किया। विद्यार्थी को एक प्रश्न प्रस्तुत किया जाता है कि जिसके आगे चार उत्तर होते हैं। उन उत्तरों में से एक उत्तर ही सही होता है। विद्यार्थी उन चार विकल्पो में से एक विकल्प अपनी अनुक्रिया के रूप में चुन लेता है। तथा मशीन उस विद्यार्थी को तुरंत पृष्ठ पोषण प्रस्तुत करती है। यदि विद्यार्थी का उत्तर सही होता है तो मशीन विद्यार्थी के अगला प्रश्न प्रस्तुत करती है। यदि उत्तर सही नही होता तो विद्यार्थी तब तक प्रयत्नशील रहता है जब तक वह सही उत्तर ढुढँ न ले।

प्रैसे ने यह देखा कि इस मशीन से प्रश्नों को जाँचने के समय की तथा मेहनत की बचत तो हुई ही, साथ मे विद्यार्थियों मे मापन योग्य अधिगम-वृद्धि भी सभंव है। प्रैसे ने रेकार्ड करने के यंत्रो के कई प्रतिमान विकसित किये।

शिक्षण मशीन के प्रकार :

शिक्षण मशीनों द्वारा अभिक्रमित अनुदेशन सामग्री को प्रस्तुत किया जाता है।

1. स्वतः अनुदेशात्मक मशीनः इस प्रकार की मशीनों मे प्रक्षेपित तथा अप्रक्षेपित मशीनों को शमिल किया जाता है। जैसे-रेडियों दूरदर्शन आदि।

2. रेखीय या श्रृखंला शिक्षण मशीन : इस प्रकार की मशीनों द्वारा श्रृखंला अनुदेशन सामग्री का अध्ययन किया जाता है।

NOTES

शिक्षण मशीनों की विशेषतायेः

1. शिक्षण मशीनों द्वारा कई प्रकार के अनुदेशनों को प्रस्तुत किया जा सकता है।
2. जिस पाठ्यवस्तु को शिक्षण मशीन से प्रस्तुत किया जाता है उसका निर्माण अलग से करके तथा मूल्यांकन के बाद उसे शिक्षण मशीन को सौपा जाता है।
3. शिक्षण मशीनों द्वारा शिक्षण समास्याओं के समाधान में सहायता मिलती है।
4. शिक्षण मशीनों मे बाहरी अनुक्रिया के लिये अवसर मिलता है। विद्यार्थी अपनी अनुक्रिया को लिखता है और उसकी पुष्टि करता है।

शिक्षण मशीनों की उपयोगिताः

1. शिक्षण मशीनों द्वारा विद्यार्थी को व्यक्तिगत विभिन्नता के अनुसार सीखने का अवसर मिलता है।
2. शिक्षण मशीनों मे पुनर्बलन की भी व्यवस्था होती है।
3. विद्यार्थी नकल नही कर सकते।
4. शिक्षण मशीनों द्वारा विद्यार्थियों की उपलब्धियों का भी मूल्यांकन किया जा सकता है।
5. शिक्षण मशीनों अध्यापक के शिक्षण कार्य को सरल बना देती है। तथा उन्हें शिक्षण मे सहायता करती है।
6. विद्यार्थी के व्यवहार को अधिक नियंत्रित किया जा सकता है।
7. विद्यार्थी की अनुक्रिया को बदला नही जा सकता
8. मशीन द्वारा विद्यार्थी की अनुक्रियाओं का सही रेकार्ड रखा जा सकता है।
9. शोध कार्य के लिये अधिगम प्रक्रिया से संबंधित वस्तुनिष्ठ आकँड़े इकट्ठे किए जा सकते है।

NOTES

शिक्षण मशीनों की सीमाये :

शिक्षण मशीनों की अपनी कुछ सीमाएँ भी है जिनके कारण इनका प्रयोग सीमित हो जाता है। ये सीमाएँ निम्नलिखित हैं।

1. मशीनों का मूल्य बहुत अधिक होता है।
2. मशीनों की मरम्मत तथा मरम्मत करने वाले, व्यक्ति बहुत मंहगे पड़ते है।
3. मशीनों के प्रयोग से विद्यार्थियों की अंगुलियो और हाथों पर घाव लग जाते है।
4. मशीनों के खराब होने से विद्यार्थियों के प्रशिक्षण पर प्रभाव पड़ता है।

बहु-माध्यम उपागम :

अनुदेशन की विभिन्न प्रविधियों के साथ सम्प्रेषण माध्यम का प्रयोग बड़ी आसानी से किया जा सकता है। इसका प्रयोग सम्पूर्ण अधिगम परिस्थितियों को उत्पन्न करके अपेक्षित उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है। शिक्षण-सामग्री को विविध रूप मे एक पाठ्य-वस्तु के लिये प्रयुक्त किया जाना ही बहुमाध्यम उपागम कहलाता है। इनका प्रयोग केवल शिक्षक ही नही बल्कि छात्र भी सीखने के लिये करते है।

शैक्षिक तकनीकी मे अनुसंधानो पर आधारित नवीन प्रवृत्तियाँ :

भारत वर्ष में शिक्षा के विभिन्न अंगों को सूक्ष्म बनाने के लिये N.C.E.R.T. नई दिल्ली की स्थापना भारत सरकार ने की थी। इस परिषद् के अनेक विभाग है। इस परिषद् ने शैक्षिक शिल्पशास्त्री की महत्ता महसूस करते हुये अभी हाल में शैक्षिक तकनीकी केन्द्र नामक एक नया विभाग प्रारंभ किया। इस केन्द्र से निम्नांकित क्षेत्रों मे कार्य प्रारंभ किया है।

1. शैक्षिक तकनीकि का प्रयोग करते हुए एक अच्छी प्रणाली का निर्माण एवं विकास करना।
2. शिक्षा तकनीकी मे सूक्ष्म वस्तु एवं स्थूल वस्तु माध्यम पर शोध एवं विकास करना ।
3. शैक्षिक तकनीकी के क्षेत्र मे विभिन्न प्रशिक्षणों द्वारा योग्यताओं एवं क्षमताओं का विकास करना।

4. शैक्षिक तकनीकी के क्षेत्र मे सामग्री एवं विभिन्न योजनाओं का मूल्यांकन करना।

NOTES

शैक्षिक तकनीकी का क्षेत्र अति विस्तृत हैं। आधुनिक युग मे यह विषय महत्वपूर्ण होता चला जा रहा है। शैक्षिक तकनीकी का प्रादुर्भाव 1900 से 1950 ई. के मध्य औद्योगिक एवं तकनीकी विकास के फलस्वरूप हुआ था। सन् 1950 के पश्चात् शैक्षिक जगत में वैचारिक एवं व्यावहारिक क्रांति के फलस्वरूप इस क्षेत्र मे विदेशों में, विशेष रूप से अमेरिका तथा इग्लैंड मे ज्ञान-विज्ञान के अन्य क्षेत्रों मे हुए नवीन विकासों का उपयोग शिक्षा प्रक्रिया को सबल बनाने के लिये किया जाने लगा। इस विषय के अर्न्तगत विभिन्न पक्षों पर बल दिए जाने के आधार पर व्यवहार तकनीकी, शिक्षा तकनीकी, शिक्षण तकनीकी, पाठ्यक्रम तकनीकी तथा प्रशासन तकनीकी आदि अनेक प्रवृत्तियाँ दृष्टि गोचर होने लगी। फलस्वरूप टीचिंग मशीन, अभिक्रमित अधिगम, व्यावहारिक अभियांत्रिकी आदि जैसे क्षेत्र शैक्षिक शोध छात्रों के खुलने लगे।

सन् 1960-70 के मध्य इन क्षेत्रों में, विदेशो मे काफी शोध कार्य किए गये। अमरीका मे पाठ्यक्रम निर्माण मे शिक्षण तकनीकी पर विशेष बल देने के लिये Association for Supervision and Curriculum Development की स्थापना की गयी। सन् 1964 मे पाठ्यक्रम निमार्ण तथा शिक्षण सिद्धांतो एवं तकनीकों मे समावेशन स्थापित करने के लिये सन् 1967 मे अनेक सुझावों से युक्त अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया।

भारतवर्ष में शैक्षिक शिल्प के क्षेत्र मे बहुत कम काम हुये हैं। सन् 1939 से लेकर 1963 के मध्य केवल 93 शोध अध्ययन टेलीविजन एवं अन्य श्रव्य-दृश्य सामग्री के क्षेत्र मे किये गये। इन चौबिस वर्षो मे विद्यालयों के शिक्षण विषयों मे श्रव्य-दृश्य सामग्री से संबंधित 34 अध्ययन, श्रव्य-दृश्य सामग्री के इतिहास पर 16 अध्ययन, फिल्म तथा सिनेमा पर 13 अध्ययन स्कूल ब्राडॅकास्ट पर 9 अध्ययन परम्परागत तथा श्रव्य-दृश्य सामग्री युक्त नवीन शिक्षण विधियों पर 6 अध्ययन तथा अन्य प्रकार के 15 अध्ययन किये गये। सन् 1955 मे काले ने ग्रौसलाइट के साथ मिलकर विदेशी भाषा मे शब्दों की आवाजों तथा

NOTES

चित्रों के उपयोग से सम्बंधित विभिन्न प्रकार के शोध कार्य किये। सन् 1960 से 1970 के दशकों मे अधिकतर शोध एवं प्रयोग भारतवर्ष मे अभिक्रमित अध्ययन के क्षेत्र मे फिर गये। क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय अजमेर के गुप्ता ने गणित के सैट थ्योरीज आदि पर इस प्रकार की सामग्री निर्माण करने का प्रयास किया। एम.एस. यूनिवर्सिटी बड़ौदा ने सर्वप्रथम एम.एड. स्तर पर शैक्षिक शिल्प विज्ञान एवं अभिक्रमित अध्ययन पाठ्यक्रम प्रारंभ किये।

सन् 1963 मे शाह मे बीजगणित मे अभिक्रमित अध्ययन सामग्री बनाकर इसके माध्यम से छात्रों को पढ़ाया और उन्होने यह सिद्ध किया कि यह शिक्षण विधि को परम्परागत शिक्षण विधियों की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली है। सन् 1966 में शर्मा तथा देसाई दोनों ने पृथक-पृथक रूप से विभिन्न विषयों मे अभिक्रमित अध्ययन सामग्री तैयारी की ओर उनकी प्रभावशीलता का अध्ययन किया। सन् 1969 मे शाह तथा कुलकर्णी ने भी इस प्रकार अध्ययन प्रणाली को अधिक प्रभावशाली एवं उपयोगी सिद्ध किया।

शाह 1971 ने चार तथा कृष्णमूर्ति ने सात प्रकार की अभिक्रमित अध्ययन प्रणालियों पर शोध कार्य किया। शैक्षिक लक्ष्यों के क्षेत्र मे क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालयों ने काफी कार्य किया है। ब्लूम तथा मेगर द्वारा विकसित विभिन्न क्षेत्रों मे लक्ष्य के अध्ययन के उपरांत डॉ.दवे ने RCEM सिस्टम के नाम से अपनी तरह के लक्ष्यों का वर्गीकरण चार क्षेत्रो मे किया। ब्लूम प्रणाली के प्रथम तीन लक्ष्यों के स्थान पर केवल एक ही लक्ष्य रखा गया। जिसका नाम सृजनात्मक लक्ष्य है।

शैक्षिक नियंत्रण के क्षेत्र मे भी कुछ कार्य किया गया है। शिक्षण के नियंत्रण से अभिप्राय उन शैक्षिक व्यवहारों से है जो शिक्षक को नियोजन, संगठन, मार्गदर्शन के परिणामों के विषय में ज्ञान प्रदान करते हैं। मूल्यांकन एवं मापन के क्षेत्र मे एम.एस.यूनिवर्सिटी बड़ौदा के डॉ.बुच व लैली, आई.आई.टी. खडगपुर के गेयन, ईविंग क्रिश्चियन कॉलेज, अहमदाबाद के डॉ. हार्पर, गोहारी यूनिवर्सिटी के टेलर तथा महाराष्ट्र स्टेट बोर्ड ऑफ सेकण्डरी एजूकेशन के वौकिल का कार्य उल्लेखनीय है।

शिक्षण अधिगम के क्षेत्र मे कार्य काफी कम हुआ है। एम.ए. मनोविज्ञान तथा एम.एड. स्तर पन अधिकतर 'पुरस्कार एवं दण्ड' विषयों पर ही शोध किये गये है। सन् 1961 मे श्यामला ने जीन प्याजे की खोजों एवं सिद्धांतो का सत्यापन छात्रों के प्रत्यय निमार्ण के क्षेत्र मे किया। उपाध्याय ने सीखने मे प्रयुक्त प्रतीकात्मक प्रक्रियाओं पर शोघ किया।

NOTES

माइक्रोटीचिगं के क्षेत्र मे N.C.E.R.T. के शिक्षण-प्रशिक्षण विभाग में कार्य किया गया। डॉ. संधू ने इससे संबंधित शोध मे उपयोगी पुस्तकों पर शोध प्रपत्रों की सूची प्रकाशित की डॉ.श्रीवास्तव, डॉ. एल.सी. सिहं आदि ने इस प्रणाली पर कई सेमीनारों की आयोजनाएँ की और उनका विवरण प्रकाशित कराया।

शैक्षिक तकनीकी मे नये विकासों के फलस्वरूप नवीन प्रकार की पाठ योजनाओं के निर्माण का कार्य भी प्रारभं हो चुका है। इस क्षेत्र में मेरठ यूनिवर्सिटी के डॉ.आर.पी. भटनागर के निर्देशन मे ओरियण्टेशन कोर्स भी आयोजित किये गये है, जिनमें विभिन्न शिक्षा विभागों के प्रवक्ताओं ने शिक्षण तकनीकियों का ज्ञान प्राप्त किया। परपरागत प्रचलित विभिन्न पाठ योजनाओं के प्रत्येक पद का पूर्ण अध्ययन किया गया और यथा संभव उनमे सुधार किये गये। इस प्रकार नयी शैक्षिक तकनीकी के विकास के आधार पर प्रत्येक पाठ योजना के लिये निम्नांकित चरण अपनाने की व्यवस्था की गयी। विकास के आधार पर प्रत्येक पाठ योजना के लिये निम्नांकित चरण अपनाने की व्यवस्था की गयी।

1. श्यामपट संबंधी आवश्यक सूचनायें-पाठ का नाम आदि।
2. छात्रों का पूर्व ज्ञान।
3. ज्ञानात्मक, तर्कात्मक, प्रयोगात्मक एवं रचनात्मक विशिष्ट उद्देश्य।
4. पाठ्यवस्तु
5. शिक्षण सहायक सामग्री
6. प्रत्याशित व्यावहारिक उदेश्य
7. अधिगम अनुभव
8. वास्तविक अधिगम उपलब्धि
9. गृहकार्य

10. सदंर्भ पुस्तकें एवं पत्रिकायें।

NOTES

कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन :

शिक्षा मे मुख्य रूप से कम्प्यूटर तीन प्रकार से उपयोग मे आता है।

1. शोध उपकरण के रूप मे
2. प्रबंधन उपकरण के रूप में
3. शिक्षण अधिगम मशीन के रूप मे

कम्प्यूटर एक इलेक्ट्रॉनिक मशीन है, जिसका सचांलन सामान्यतः विद्युत शक्ति से होता है। इसमें कम्प्यूटर की-बोर्ड, इलेक्ट्रॉनिक सर्किट, स्टोरेज प्रभाग तथा रेकार्डिग उपकरण होते है। ये बहुत तेजी के साथ गणितीय संगणनाएँ करने मे समर्थ होते हैं। साधारण केलकुलेटरों की अपेक्षा इनमें 'स्टोरेज' करने की अद्भुत क्षमता होती है। यह अपने मे सूचनाओं व आँकडेां का विशाल भंडार रखता है और आवश्यकता पडने पर चयन, द्वारा तुरन्त वांछित सूचनाएँ प्रदान करता है।

कम्प्यूटर मे पाँच मूलभूत प्रयोग होते हैं। जो निम्नलिखित है-

1. अदा उपकरण
2. प्रदा उपकरण
3. स्मृति भंडार
4. परिकलन यूनिट
5. नियत्रंण यूनिट

कम्प्यूटर एक हार्डवेयर यंत्र है। इसमें प्रोग्राम बनाकर Feed करना होता है। प्रोग्राम के अनुसार कम्प्यूटर कार्य करता है। कम्प्यूटर की अपनी भाषाएँ होती है जैसे-Basic, Logo, Cobal तथा Pilot आदि। हमे इन्हें जानना चाहिये।

कम्प्यूटर शिक्षण मे प्रयोग : कम्प्यूटर का प्रयोग कर शिक्षण की दो विधियाँ है।

1. कम्प्यूटर की मदद से दी जाने वाली शिक्षा मे क्षेत्र सीधे सक्रिय रहते हैं। ओर शैक्षिक सामाग्री कम्प्यूटर पद्वति से एकत्रित की जाती है।
2. दूसरे विधि मे शिक्षक हार्डवेयर तथा अध्ययन सामग्री पर अश्रित रहता है। इनमें छात्रों का कम्प्यूटर से सीधा संबंध नही होता है।

कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन :

कम्प्यूटर मे लीनियर या ब्रांचिग अभिक्रमित अध्ययन का प्रयोग किया जाता है। एक ही समय में अनेक छात्रों की जरूरतों को पूरा करने के लिये यह एक सुपर मशीन की भांति कार्य करता है। कम्प्यूटर के द्वारा प्रत्येक छात्र के प्रत्युतरों का रेकार्ड रखा जाता हैं इन प्रत्युतरों के आधार पर ही यह निर्णय लिया जाता है। कि आगे कौन सी सूचनाओं छात्रों को प्रदान करनी हैं। इसके द्वारा केवल एक उत्तर ही नही वरन् पहले के सभी उत्तरों की सीरिज भी प्रस्तुत की जा सकती है। इसके माध्यम से उत्तर देने मे लगा समय तथा छात्रों के प्रत्युत्तरों की सत्यता का लेखा-जोखा रखना भी सभंव है।

कम्प्यूटर-सहायक अनुदेशन से छात्रों को अनेक प्रकार से व्यक्तिगत रूप से भी शिक्षण प्रदान किया जाता है। छात्रों की विभिन्न रूचिद्व अभिवृत्ति, उपलब्धि आदि के आधार पर व्यक्तिनिष्ठ अनुदेशन तैयार किया जा सकता है। छात्रों की सीखने की प्रक्रिया पर कम्प्यूटर पूरा नोट बनाता है। तथा दिये गये प्रकरण को सीखने मे प्रगति का रेकार्ड भी रखता है। उसकी प्रगति के अनुसार आगे सीखने के प्रोग्राम में आवश्यक परिवर्तन भी यह करता है।

उपयोग :

कम्प्यूटर सहायक अनुदेशन के निम्नलिखित महत्वपूर्ण उपयोग है।

1. यह शिक्षक तथा छात्रों के लिये तथ्यों तथा सूचनाओं की प्राप्ति का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है।
2. इसके माध्यम से छात्रों को अभ्यास के अवसर प्रदान किये जाते है।
3. इसके द्वारा अन्तःक्रिया ट्यटोरियल उपागम के माध्यम से छात्रों को सरलता से शिक्षा दी जाती है। इसमें तीन महत्वपूर्ण बाते है।
   (क) छात्रों को व्यक्तिगत-अवधान तथा निर्देशन।
   (ख) छात्रों की उनकी गति तथा समग्र के अनुसार स्वयं सीखने के अवसर।
   (ग) छात्रों के लिये वस्तुनिष्ठ तथा विशिष्ट पृष्ठ-पोषण

NOTES

NOTES

4. Simulation तथा खोलों के द्वारा छात्रों को प्रेक्षण तथा आत्म विश्वास CAI से प्रदान किया जा सकता हैं।
5. अनुकरणीय प्रयोगशाला के रूप मे उपयोगी है।
6. विविध कौशलों के विकास मे भी यह सहायता देता है।
7. शिक्षको के वेतन बिल आदि बनाने मे सफलतापूर्वक प्रयोग किया जाता है।
8. मूल्यांकन प्रक्रिया में सहायक है।
9. समय सारणी बनाने मे उपयोगी है।
10. विभिन्न शैक्षिक संस्थानों मे प्रवेश परीक्षा बनाने, परीक्षाफल तैयार करने तथा अंक तालिका एवं प्रमाण-पत्र तैयार करने मे यह उपयोगी है।

श्रृखंला-अभिक्रमित-अनुदेशन :

अभिक्रमित-अनुदेशन का अविर्भाव मनोविज्ञान की प्रयोगशाला के शोध कार्यो से हुआ। अधिगम के सिद्धांत मनोवैज्ञनिकों की देन है। हावर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर बी.एफ.स्किनर ने सक्रिय अनुबद्ध अनुक्रिया सिद्धांत का प्रतिपादन किया और उसको शिक्षा की प्रक्रिया मे उपयोग करने का भी प्रयास किया है। इस सिद्धांत को उपयोग करके उन्होंने संधि अनुबद्ध अनुक्रिया शिक्षण प्रतिमान का विकास किया जिसका मुख्य लक्ष्य व्यवहार परिवर्तन है।

आवश्यकता :

व्यवहार परिवर्तन की दृष्टि से श्रृंखला अभिक्रमित अनुदेशन का विशेष महत्व है। शिक्षण की गंभीर समस्याओं के समाधान मे इसका अद्भूत योगदान माना जाता है। अग्रलिखित समस्याओं के समाधान के लिये इसका प्रयोग किया जाता है।

1. छात्रों की क्रियशीलता की अपेक्षा शिक्षण प्रस्तुतीकरण पर अधिक बल दिया जाता है।
2. शिक्षण विधियाँ, पाठ्य-पुस्तकें, सहायक सामग्री छात्रों की तत्काल जाँच के लिये कोई ऐसी व्यवस्था नही करते जिससे यह जानकारी हो सके कि छात्रों को कितनी सफलता मिल रही है।

3. शिक्षण मे छात्रों की कमजोरियों के निदान के लिये कोई व्यवस्था नही होती ओर उपचारात्मक अनुदेशन की व्यवस्था की जाती है।

4. छात्रों को अध्ययन की पाठ्य पुस्तकों तथा अध्ययन सहायक सामग्री में छात्र के व्यवहार तथा अनुक्रियाओं को पुनर्बलन प्रदान करने की कोई व्यवस्था नही की जाती।

NOTES

अवधारणाएँ :

1. **स्वतंत्रता :** छात्र की सही अनुक्रियाओं या व्यवहारों को प्रेरित करने और गलत अनुक्रियाओं को छोड़ देने से वे अधिक सीखते है। छात्र अपनी प्रत्येक अनुक्रिया की जाँच करता है। अनुक्रिया को सही पाने पर उसे पुनर्बलन मिलता हैं और गलत अनुक्रिया करने पर पद को दोहराना पड़ता है।

2. **तत्परता :** छात्र तत्पर रहने से अधिक सीखता है इस अनुदेशन मे छात्र को प्रत्येक पद के लिये अनुक्रिया करनी होती है। अनुक्रिया के लिये छात्र की तत्पर रहना पड़ता है। इस प्रकार अभिक्रमित अनुदेशन का अध्ययन छात्र तत्पर रहकर करता है और निष्पत्ति स्तर ऊचाँ रहता है।

3. **बोधगम्य आकार :** यदि पाठ्य वस्तु को छोटे-छोटे पदो में प्रस्तुत किया जायें और पद का आकार छात्रों के लिये बोधगम्य हो तो छोटे-छोटे पदों मे प्रस्तुत किया जाता है।

4. **कम से कम त्रुटियाँ :** अध्ययन के समय छात्र कम से कम त्रुटियाँ करने पर अधिक सीखता है। श्रृंखला अनुदेशन की छात्रों को त्रुटि नही करना चाहिये। मानक पद वह माना जाता है जिस पर कोई छात्र त्रुटि नही करता है।

5. **क्रमबद्ध पाठ्यवस्तु :** पाठ्यवस्तु की क्रमबद्ध व्यवस्था छात्रों के अनुरूप होने पर अधिगम अधिक होता है। श्रृंखला अभिक्रमित अनुदेशन मे पाठ्य वस्तु मे तार्किक क्रम का मूल्यांकन किया जाता है। और मनोविज्ञान की दृष्टि से शुद्ध होने पर अभिक्रमित पुस्तक का प्रकाशन किया जाता है।

6. **उभारक अनुबोधक :** इसके प्रास्तावना पदों मे उभारक तथा प्राथमिक अनुबोधक प्रयुक्त किये जाते हैं। जिससे पूर्व ज्ञान का नवीन ज्ञान से संबंध स्थापित किया जा सके। इसकी निर्माण विधि मे छात्रों के पूर्व व्यवहारो को लिखा जाता है।

NOTES

7. अवधि की स्वतंत्रता : छात्रों को उनकी क्षमताओं तथा अध्ययन गति के अनुकूल अवधि की स्वतंत्रता देने से छात्र अधिक सीखते है। इसके अध्ययन के लिये प्रत्येक छात्रों को पूर्ण स्वतत्रंता दी जाती है जिससे छात्रों को व्यक्तिगत भिन्नता के अनुसार सीखने का अवसर मिलता है।

श्रृंखला अभिक्रमिक अनुदेशन की संरचना :

आव्यूह मे पाठ्य-वस्तु को छोटे-छोटे पदो मे क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाता है। प्रत्येक पद छात्र को नवीन ज्ञान प्रदान करता है।

1 उद्दीपन : श्रृंखला अभिक्रमित अनुदेशन व्यवहारवादी मनोविज्ञान के सिद्धांतो पर आधारित है। अधिगम की प्रक्रिया की उद्दीपन-अनुक्रिया (S-R) के रूप मे व्याख्या की जाती है। वातावरण और परिस्थिति को प्रधानता दी जाती है। उद्दीपन पाठ्य वस्तु के रूप मे प्रस्तुत किया जाता है।

2. अनुक्रिया : छात्र के उद्दीपन के लिये अपेक्षित अनुक्रिया करनी होती है जिसे आश्रित चर कहते हैं। अनुक्रिया उद्दीपन पर निर्भर होती है। सही अनुक्रिया करने से छात्र नया ज्ञान प्राप्त करता है।

3. पुनर्बलन : छात्रों को अपनी अनुक्रियाओं की जाँच करनी होती है। सही उत्तर पदों के साथ दिया जाता है। सही अनुक्रिया पाने पर छात्रों को प्रसन्नता होती है। और अकेले पद को पढ़ने के लिये पुनर्बलन मिलता है।

श्रृंखला अभिक्रमित अधिगम के पदों के इस स्वरूप से छात्रों में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन लाया जाता है।

श्रृंखला अभिक्रमित अनुदेशन के पदों मे प्रकार :

प्रकृति के आधार पर पदों को चार भागों मे बाँटा जा सकता है।

1. प्रस्तावना पद : इन पदों का कार्य पूर्व व्यवहारों से नवीन व्यवहारों को संबंधित करना होता है। अभिक्रमिक के लिये इन पदों का आरंभ करना चुनौती पूर्ण कार्य होता है।

2. शिक्षण पद : इनका मुख्य लक्ष्य शिक्षण करना होता है। प्रत्येक पद एक नया ज्ञान या नया व्यवहार प्रदान करता है। इन पदों की अनुक्रियाओं का संबंध अतिम व्यवहार से होता है।

3. अभ्यास पद : इनका मुख्य लक्ष्य शिक्षण पदों से जो ज्ञान अथवा नवीन व्यवहार सीखा है उसका अभ्यास कराना है जिससे धारण अधिक हो सके। अभ्यास पदों की अनुक्रियाओं का संबंध अपेक्षित व्यवहारों से होता है।

NOTES

4. परीक्षण पद : इनका लक्ष्य परीक्षण करना है कि शिक्षण तथा अभ्यास पदो से छात्रों ने कितना सीखा है। इन पदों के स्वरूप मे उद्दीपन तथा अनुक्रिया होती है। अतिरिक्त उद्दीपन या अनुबोधक प्रयुक्त नही किये जाते हैं। अपने प्रत्यास्मरण तथा अभिज्ञान की अर्जित क्षमताओं से छात्र सही अनुक्रिया करते है।

श्रृंखला अभिक्रमित अनुदेशन की विशेषताएँ :

1 यह शिक्षण का एक ऐसा आव्यूह है जो मनोविज्ञान के अधिगम के सिद्धांतो पर आधारित है।

2 पाठ्यवस्तु को क्रमबद्ध रूप में छोटे-छोटे पदों मे प्रस्तुत किया जाता है। जो तार्किक क्रम मनोविज्ञान की दृष्टि से भी प्रभावशील होता है।

3 इसकी सहायता से कठिन प्रत्ययों को सरलता एवं सुगमता से बोधगम्य बनाया जाता है।

4 इसमे विभिन्नताओं के अनुसार सीखने की स्वतत्रंता प्रदान की जाती है।

5 अधिगम के समय छात्र को क्रियाशील रहना पड़ता है। जिससे छात्र सीखने के लिये तत्पर रहता है।

6 परम्परागत शिक्षण की अपेक्षा अभिक्रमित अनुदेशन से छात्र अधिक सीखते है।

7 छात्रों की बोधगम्यता के अनुरूप पाठ्यवस्तु को छोटे-छोटे पदों मे प्रस्तुत किया जाता है।

शाखीय अनुदेशन :

शाखीय अनुदेशन का विकास मानवीय प्रशिक्षण की समस्याओं से हुआ है। नार्मन ए.क्रावडर ने सन् 1954 ई. में संयुक्त राज्य अमेरिका मे इसका विकास किया। यह वायुसेना में एक मनोवैज्ञानिक के पद पर कार्य रहे थे। उन्हें लड़ाकू ज़हाजों की मरम्मत के लिये मिस्त्रियों को प्रशिक्षण देने का कार्यभार दिया गया था।

NOTES

क्रावडर ने इस समस्या के समाधान मे यह पाया कि प्रशिक्षणार्थी एक योग्य प्रशिक्षण की अपेक्षा वास्तविक उपकरण की सहायता से अच्छा सीख सकता है। क्रावडर ने यह भी स्पष्ट किया कि प्रशिक्षार्थी का सम्पूर्ण उपकरण का प्रत्यक्षीकरण कराने पर ही उपकरण की कमजोरियों का पता किया जा सकता है।

सिद्धांत :

1. छात्रों की गलत अनुक्रियायें अधिगम मे बाधक नही होती अपितु छात्रों को अध्ययन के लिये निर्देशन प्रदान करती हैं। प्रत्येक अनुक्रिया छात्रों मे सम्प्रेषण की परीक्षा करती है। गलत अनुक्रिया से छात्र की कमजोरियों का सम्प्रेषण का निदान होता है।
2. इसमें प्रश्नों का उद्देश्य निदान करना होता है, परीक्षण करना नही। इस प्रविधि से निदान के लिये विशिष्ट उपचार तुरंत प्रदान किया जाता है। जिससे प्रत्येक छात्र की कमजोरियों मे सुधार किया जाता है।
3. इसमें मानव अधिगम के प्रतिमान को प्रत्यक्ष रूप में सरलता से प्रयोग किया जा सकता है।
4. शारणीय अभिक्रमकों की मुख्य रूचि यह होती है कि छात्र ने सीखा है अथवा नही। वे इस गहराई मे रूचि नही लेते हैं कि छात्र कैसे सीखता है। इस प्रकार इस अनुदेशन मे अधिगम की प्रक्रिया की अपेक्षा अधिगम उत्पादन को अधिक महत्व देते हैं।
5. आंतरिक अनुदेशन में छात्रों को सही अनुक्रिया करने के लिये कोई अनुबोधक तथा संकेत प्रयुक्त नही किया जाता है। प्रश्न अनुबोधक रहित होता है। प्रश्न को बहुनिर्वचन में प्रस्तुत किया जाता है। इसलिए सही अनुक्रिया के चयन में विभेदीकरण अधिगम को बढ़ावा मिलता है।

शाखीय अनुदेशन के मूल सिद्धांत प्रशिक्षण की प्रविधि की व्याख्या पर निर्भर है। इस प्रविधि की व्याख्या ही इस अनुदेशन के सैद्धांतिक पक्ष का प्रतिपादन करती है।

अवधारणाएँ :

1. किसी पाठ्य वस्तु को छात्रों के समक्ष सम्पूर्ण रूप मे प्रस्तुत करने से वे उसे सुगमता से सीख लेते है। इसलिये इसे व्याख्यात्मक अनुदेशन भी कहते हैं। सम्पूर्ण प्रत्यय या इकाई की व्याख्या एक साथ की जाती है।
2. छात्रों की गलत अनुक्रियायें अधिगम मे बाधा नही होती अपितु निदान में सहायक होती है।
3. छात्रों के अध्ययन के साथ निदान के लिये उपचारात्मक अनुदेशन प्रदान किया जायें तो अधिक सीखते है।
4. छात्र व्यक्तिगत भिन्नताओं के लिये उनकी आवश्यकताओं के अनुसार सीखने का अवसर देने से प्रक्रिया प्रभावशाली होती है।

NOTES

अभिक्रमित अनुदेशन :

सन् 1920 मे सिडनी एल. प्रैसी ने एक ऐसी शिक्षण मशीन का निर्माण किया जिसके द्वारा छात्रों के सामने प्रश्नों की एक श्रृंखला प्रस्तुत हो जाती थी। छात्र इससे अपनी प्रगति का ज्ञान प्राप्त करते हुये अपने उद्देश्यों की ओर जाने के लिये दुगुनी शक्ति से प्रेरित होकर प्रभावशाली ढ़ग से लग जाते थे।

अर्थ :

स्मिथ व मूरे : अभिक्रमित अनुदेशन किसी अधिगम सामग्री को क्रमिक पदों की श्रृखंला मे व्यवस्थित करने वाली एक क्रिया है। जिसके द्वारा छात्रों को उनकी परिचित पृष्ठभूमि से एक नवीन तथा जटिल प्रत्ययों, सिद्धांतो तथा अवबोधों की और ले जाया जाता है।

स्टोफल : ज्ञान के छोटे अंशो को एक तार्किक क्रम मे व्यवस्थित करने को अभिक्रम तथा इसकी सम्पूर्ण प्रक्रिया को अभिक्रमित अनुदेशन कहा है।

डी.एल. कुक : अभिक्रमिक अधिगम, स्व-शिक्षण विधियों के व्यापक सम्प्रत्यय को स्पष्ट करने के लिए प्रयुक्त एक विधा है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि अभिक्रमित अध्ययन वह अनुदेशन है जिससे पाठ्य-सामग्री को छोटे पदों मे

NOTES

विभाजित करके श्रृखंलाबद्ध किया जाता है। तथा इसे छात्रों के समक्ष क्रमानुसार प्रस्तुत करके कम से कम गलतियाँ करते हुए उन्हें नवीन एवं जटिल विषय वस्तु की शिक्षा उनकी अपनी गति के अनुसार प्रदान की जाती है। इस सारी प्रक्रिया में छात्रों को अपनी प्रगति के ज्ञान के द्वारा पृष्ठ-पोषण दिया जाता है।

विशेषताएँ :

1. अभिक्रमित सामग्री व्यक्तिनिष्ठ होती है। और इसमें एक समय मे केवल एक ही व्यक्ति सीखता है।
2. इसमें पाठ्य सामग्री को छोटे से छोटे अंशो मे विभाजित किया जाता है।
3. फिर छोटे-छोटे अंशो को श्रृखंलाबद्ध किया जाता है।
4. अभिक्रमित सामग्री मे प्रत्येक पद अपने आगे वाले पद से तार्किक क्रम में स्वाभाविक रूप से जुडा होता है।
5. सीखने वाले को सक्रिय सतृत प्रयास करने पड़ते है।

सिद्धांत :

1. व्यवहार-विश्लेषण का सिद्धांत
2. छोटे-छोटे अंशो का सिद्धांत
3. सक्रिय सहभागिता का सिद्धांत
4. तत्काल पृष्ठ-पोषण का सिद्धांत
5. स्वगति से सीखने का सिद्धांत
6. सामग्री की वैद्यता का सिद्धांत
7. छात्र परीक्षण तथा प्रगति का सिद्धांत
8. छात्र अनुक्रियाओं का सिद्धांत

अभिक्रमित अध्ययन का निर्माण :

इसकी रचना को तीन प्रमुख भागों मे बाँटा गया हैं।

(क) तैयारी अथवा आयोजन

(ख) रचना या अभिक्रम लेखन

(ग) मूल्यांकन अथवा परीक्षण

(क) तैयारी का आयोजन :

1. प्रकरण था शीर्षक का चयन : प्रोग्राम बनाने के लिए जिस भी प्रकरण या शीर्षक का चयन किया जाये उसके चयन के समय निम्न बातों का ध्यान रखा जाना चाहिये।

NOTES

1. उस प्रकरण या शीर्षक पर पहले से कोई प्रोग्राम उपलब्ध तो नही है।
2. वह प्रकरण क्या अन्य विधि से प्रभावशाली रूप से नही पढ़ाया जा सकता है।
3. क्या यह छात्रों के दृष्टिकोण से अधिक सरल, तार्किक तथा मनोवैज्ञानिक बना कर प्रस्तुत किया जा सकता है।
4. क्या यह छात्रों की पाठ्यक्रम सम्बधी आवश्यकताओं को पूरा करता है।
5. क्या प्रोग्राम बनाने वाले व्यक्ति को इस प्रकरण पर पूर्ण ज्ञान है।
6. क्या प्रकरण का स्वरूप समुचित व्यवस्था के योग्य है।

2. छात्रों के पूर्व ज्ञान की सूचना : यह प्रोग्राम छात्रों के लिये है। अतः प्रोग्राम बनाने के पूर्व जिन छात्रों के लिये प्रोग्राम बनाया जा रहा है। उन छात्रों की आयु, लिंग, सामाजिक, आर्थिक, मानसिक स्तर रूचि, योग्यताओं, पृष्ठ भूमि तथा पूर्वानुभव आदि से संबंधित सूचनायें एकत्रित करनी चाहिये तथा तदनुसार ही प्रोग्राम की आयोजना करनी चाहिये ।

3. उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप मे लिखाना : इस पद के अर्न्तगत उद्देश्यों का प्रतिपादन किया जाता है। और उन्हें व्यावहारिक भाषा मे लिखा जाता है। इसके लिए कार्य-विवरण तथा कार्य-विश्लेषण दोनों ही क्रियाएं की जाती है। उद्देश्यों को लिखते समय उपयुक्त कार्य परक क्रियाओं का चयन तथा प्रयोग करना चाहिये। व्यावहारिक-उद्देश्य वस्तुनिष्ठ मानदण्ड परीक्षाओं के निर्माण में सहायक होते है।

4. विषय-वस्तु की रूपरेखा का निर्माण : छात्रों के पूर्व अनुभवों पूर्वज्ञान तथा पूर्व व्यवहारों एवं निर्धारित उद्देश्यों के अनुरूप विषय वस्तु की रूपरेखा बनायी जाती है। इस रूपरेखा के निर्माण में आवश्यक है कि उसके अर्न्तगत वह सारी विषय-वस्तु आ जायें जिसका प्रोग्राम बनाना हैं।

NOTES

5. मानदण्ड परीक्षा का निर्माण : इस पद के अन्तर्गत छात्रों के अंतिम व्यवहारों के मूल्यांकन के लिये मानदण्ड परीक्षा का निर्माण किया जाता है। इस परीक्षण मे विशिष्ट उद्देश्यों के अनुरूप वस्तुनिष्ठ प्रश्नों मे पूछा जाता है। इसमें उन सभी व्यवहारों एवं कौशलों का मूल्यांकन किया जाता है। जिन्हे सीखाने कें लिए प्रोग्राम बनाया गया है। यही परीक्षण मानदण्ड कहलाते है।

(ख) रचना या अभिक्रम लेखन :

इसके अन्तर्गत वास्तविक प्रोग्राम को लिखा जाता है। इसे लिखते समय अभिक्रमित अध्ययन के मूलभूत सिद्धांतो का सदैव ध्यान रखना चाहिये।

1 बोधगम्य पदों की रचना :

1 **उद्दीपन :** अनुक्रिया उत्पन्न करने की परिस्थिति के रूप मे वह अंग जो विषय-वस्तु छात्रों के सामने प्रस्तुत करता है।

2 **अनुक्रिया :** पद को पढ़ने के पश्चात् छात्र किसी न किसी प्रकार की अनुक्रिया अवश्य करता है।

3 **पुनर्बलन या प्रतिपुष्टि :** छात्र अपनी अनुक्रिया को सही अनुक्रिया से मिलान करता है और पुनर्बलन या प्रतिपुष्टि प्रात्त करता है। सामान्यः प्रोग्राम मे चार प्रकार के पद सम्मिलित रहते है।

(अ) **शिक्षण पद :** इन पदों के माध्यम से छात्रों के समझ नवीन विषय-वस्तु प्रस्तुत की जाती है ये पद किसी भी प्रोग्राम मे लगभग 60 प्रतिशत से 70 प्रतिशत होते है।

(ब) **अभ्यास पद :** नयी विषय वस्तु के पश्चात् ज्ञान को स्थायी बनाने के लिये अभ्यास पदों का निर्माण किया जाता है। छात्र इनका प्रयोग करके सीखे गये ज्ञान का बारम्बार प्रयोग कर अभ्यास करते है। ऐसे पद 20 प्रतिशत से 25 प्रतिशत तक रखे जा सकते है।

(स) **परीक्षण पद :** छात्रों द्वारा सीखे गये ज्ञान के परीक्षण हेतु परीक्षण पदों का निर्माण किया जाता है। इनका उद्देश्य सीखे हुए ज्ञान का मूल्यांकन करना होता है। ये 10 प्रतिशत से 15 प्रतिशत तक रखे जा सकते है।

(द) **छात्रों के उत्तरों को निर्देशित करने के लिये उपक्रमक को तथा अनुबोधकों का प्रयोग :** प्रयोग इस प्रकार लिखा जाना चाहिए जिससे कि छात्र अधिक से अधिक सही अनुक्रिया करे। जब छात्र उचित अनुक्रिया करने मे सफल नही होते तब उपक्रमक तथा अनुबोधक का प्रयोग किया जाता है।

NOTES

2. फ्रेमो को उचित क्रम प्रदान करना :

फ्रेम तैयार करने के पश्चात् उन्हें सुनिश्चित तारतम्य मे व्यवस्थित किया जाता है। इन्हे व्यवस्थित करते समय मनोवैज्ञानिक से तार्किक क्रम की ओर शिक्षण सूत्र का उपयोग करना चाहिये।

3. मूल ड्राफ्ट को लिखना :

सम्पादन करना : तैयार प्रोग्राम के मूल ड्रॉफ्ट का सतकर्ता पूर्वक सम्पादन करना चाहिए।

(अ) किसी विषय वस्तु में किसी प्रकार की तकनीकि त्रुटि तो नही है यह देखना चाहिये। इस स्तर पर विषय विशेषज्ञों की मदद ली जा सकती है।

(ब) प्रोग्राम विशेषज्ञों की मदद से यह देखा जाता है कि मूल ड्राफ्ट में प्रोग्राम अनुदेशन की तकनीकियों, पद रचनाओं, फ्रेमों को उचित क्रम देने में या मूल ड्राफ्ट की शैली, भाषा में कोई त्रुटि तो नही है।

(स) भाषा-विशेषज्ञों की मदद से तैयार मूल ड्राफ्ट में व्याकरण की गलतियाँ, स्पेलिंग की त्रुटियाँ तथा अनुपयुक्त एवं अस्पष्ट भाषा आदि का पता लगाकर उन्हे ठीक किया जाता है।

(ग) परीक्षण एवं मूल्यांकन :

1 **व्यक्तिगत परीक्षण :** इसमे प्रोग्राम को 4-5 छात्रों पर प्रशारित किया जाता है और यह पता लगाया जाता है कि तैयार प्रोग्राम ड्राफ्ट में पद, आकार, भाषा, प्रत्यय, उपक्रमक तथा अनुबोधक आदि से संबंधित क्या-क्या कमियाँ है।

NOTES

2 **लघु समूह परीक्षण** : परिवर्तित तथा परिमार्जित प्रोग्राम पुनः 10-20 छात्रों के समूह पर प्रशारित किया जाता है। छात्रों से इस ड्रॉफ्ट मे जरूरी परिवर्तनों तथा सुधार हेतु सुझाव मांगे जाते है।

3 **क्षेत्र परीक्षण** : प्रोग्राम को अंतिम रूप देने के लिये प्रोग्राम को एक प्रतिनिधि न्यादर्श पर पुनः प्रकाशित किया जाता है और छात्रों की बड़े पैमाने पर की गई प्रतिक्रियाओं तथा दिये सुझावों के आधार पर ड्रॉफ्ट मे पुनः संशोधन किया जाता है। इस परीक्षण के आधार पर प्रोग्राम की उपयुक्तता तथा वैद्यता स्थापित की जाती है।

4 **मूल्यांकन** : क्षेत्र परीक्षण से प्राप्त आँकड़ो के आधार पर निम्नांकित चीजों का मूल्यांकन किया जाता है।

(अ). प्रोग्राम की त्रुटि दर : यह ज्ञात करने के लिये निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

$$\text{Programme Curent Rate} = \frac{\text{Total No. of Crolp x 100}}{\text{Total No. of Respenses x 40 No. seats}}$$

त्रुटि दर रेखीय प्रोग्राम मे 5 प्रतिशत से 10 प्रतिशत तथा शाखात्मक प्रोग्रामों मे 20 प्रतिशत तक हो सकती है।

(ब). अभिक्रम घनत्व : इससे प्रोग्राम मे कठिनाई स्तर का पता लगाया जाता है। यह ज्ञात करने के लिये निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

$$\text{Type of Ken Ratio} = \frac{\text{विभिन्न प्रकारों की अनुक्रियाओं की संख्या}}{\text{कुल अनुक्रियाओं की संख्या}}$$

TTR का मूल्य 0.25 से 0.33 के मध्य रहना चाहिए।

(स). तारतम्य प्रवाह : तारतम्य प्रवाह स्केलोग्राम की सहायता से देखा जाता है। मानदण्ड परीक्षण के प्राप्तांको के आधार पर स्केलोग्राम तालिका बनायी जाती है। इस तालिका के आधार पर प्रोग्राम का तारतम्य प्रवाह देखा जाता है। यादि तालिका देखने पर पता चलता है कि पाठ्यक्रय मे क्रम व्यवस्था उचित नही है तो प्रोग्राम मे सुधार लाने का प्रयास करना पडता है।

यूनिट-पंचम :

NOTES

दुरवर्ती शिक्षा :

दूरवर्ती शिक्षा आज पूरे विश्व मे लोकप्रिय होती जा रही है। पिछले चार दशकों मे दूरवर्ती शिक्षा ने क्षेत्र में अभूतपूर्व परिवर्तन ला दिया है। यह परिवर्तन शिक्षा के क्षेत्र में अनेक नये सम्प्रत्ययों को जन्म दे रहा है। पूरा देश, देश के नागरिक इस व्यवस्था का स्वागत कर रहे है।

अर्थ व परिभाषा :

दूरवर्ती शिक्षा अनेक अर्थों में प्रयोग की जाती है। अर्थों के अनुसार उनके कई नाम भी प्रचलित है जैसे-

1. पत्रचार शिक्षा
2. ग्रह अध्ययन
3. परिसर से बाहर अध्ययन
4. बाध्य अध्ययन
5. दूरस्थ
6. बहु-माध्यम
7. मुक्त अधिगम
8. स्वंतत्र अध्ययन

परिभाषायें :

फिलिप कौम्बस तथा मंजूर अहमद के अनुसार : पहले से स्थापित औपचारिक शिक्षा के क्षेत्र से बाहर से चलने वाली सुसंगठित शैक्षिक प्रणाली को दूरवर्ती शिक्षा कहा जाता है। यह एक स्वतंत्र प्रणाली के रूप में अथवा किसी बड़ी प्रणाली के अंग के रूप मे सीखने वालों के एक निश्चित समूह को निश्चित शैक्षिक उद्देश्यों की प्रप्ति के लिये मदद देती है।

बोर्जी होमवर्ग : शिक्षा के सभी स्तरों पर अध्ययन के विभिन्न प्रकार जो शिक्षक के निरन्तर तत्कालीन निरीक्षण में नहीं है। उन्हें दूरवर्ती शिक्षा कहा जाता है।

पीटर्स के अनुसर : दूरवर्ती शिक्षा, ज्ञान कौशल तथा अभिवृत्ति प्रदान करने की एक नवीन तथा उभरती हुयी, विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति करने वाली शैक्षिक संरचना है जो दूरगामी शिक्षा के रूप में लोगो को शिक्षा देने में समर्थ है।

NOTES

मालकम आदिशेषैया के अनुसार : दूरवर्ती शिक्षा का तात्पर्य उस शिक्षण प्रक्रिया से है, जिसमें स्थान और समय के आयाम शिक्षण और अधिगम के मध्य हस्तक्षेप करते है।

विशेषताये :

1. दूरवर्ती शिक्षा, शिक्षण-अधिगम की एक सुसंगठित तथा सुव्यवस्थित प्रणाली है।
2. इसमें आमने-सामने बैठकर पढ़ने-पढाने का बंधन नही होता।
3. यह प्रणाली छात्रों की आवश्यकताओं स्तर एवं उनके दैनिक कार्यों से जुडी रहती है।
4. यह एक ज्यादा लचीली विधि है।
5. छात्रों को इस विधि द्वारा अपनी इच्छानुसार समय लगाकर उसकी अपनी योग्यता तथा गति के अनुसार पढ़ने के अवसर मिलते है।
6. दूरवर्ती शिक्षा स्व-अनुदेश की प्रणाली पर आधारित होती है।
7. यह शिक्षा को दूर-दूर तक के स्थानों तक पहुँचाने का प्रयास करती है।
8. अनुदेशन साम्रगी के अध्ययन का उत्तरदायित्व छात्रों पर अधिक होता है।

उद्देश्य/लक्ष्यः

1. दूरवर्ती शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य है। देश के सुदूर कोने में स्थित विभिन्न स्थानों पर पढ़ने वालों के द्वार-द्वार तक शिक्षा पहुँचाना।
2. छात्रों के स्तर, आवश्यकताओं, क्षमताओं तथा आयु के अनुसार अधिगम सामग्री तैयार करना तथा निर्दिष्ट विधियों द्वारा छात्रों तक पहुँचाने का सफल प्रयास करना।
3. इस प्रणाली में ज्ञान व अधिगम को विभिन्न विधाओं के प्रयोग द्वारा छात्रों तक पहुँचाने का सफल प्रयास करना।
4. ऐसे लोगों के लिये शिक्षा के अवसर पुनः प्रदान करना, जो किन्ही कारणों से अपने जीवन मे शिक्षित होते के अवसर खो चुके है।
5. विभिन्न कार्यो में लोग तथा विभिन्न व्यवसायों से जुड़े विभिन्न व्यक्तियों तथा गृहणियों को उनकी आवश्यकतानुसार जीवन पर्यन्त शिक्षा प्राप्त हो सके।

6. दूरवर्ती शिक्षा के उपकरण का प्रयोग कर परम्परागत विद्यालयों, कॉलेजो तथा विश्वविद्यालयों पर कार्य का दबाव कम करने के लिये प्रयास करना।
7. संविधान मे वर्णित सभी को शिक्षा के समान अवसर सिद्धांत को बढ़ावा देना।

NOTES

अवश्यकता एवं महत्वः

1. ऐसे लोग जो दूर-दराज के गाँवों मे वन्य तथा पहाड़ी प्रदेशो में रहते है और जहाँ शैक्षिक सुविधाओं का अभाव है या वे बहुत सीमित मात्रा में है। वहाँ दूरवर्ती शिक्षा, शिक्षा की ज्योति फैलाने में एक शक्तिशाली साधन है।
2. दूरवर्ती शिक्षा ऐसे लोगों के लिये भी वरदान है। जो अपनी शिक्षा को आगे जारी रखने के लिये अन्यत्र जाने मे पूर्णतया असमर्थ है।
3. दूरवर्ती शिक्षा उन लोगों के लिये भी एक उत्तम साधन है। जो किसी कारणवश जीविकोपार्जन के लिये किसी नौकरी सा धंधे मे लग जाते है। और औपचारिक शिक्षा प्राप्त नही कर पाये है।
4. दूरवर्ती शिक्षा, शैक्षिक तथा व्यावसायिक अवसरों की समानता प्रदान करने वाला एक सशक्त माध्यम है।
5. दूरवर्ती शिक्षा, एक गतिमान भविष्योन्मुखी सांगर्णनक संरचना विकसित करने का एक अच्छा अवसर है।
6. दूरवर्ती शिक्षा, बहुमाध्यमीय उपागम का प्रयोग करती है-फलस्वरूप छात्रों की अधिगम प्रक्रिया को अधिक बल मिलता है।
7. दूरवर्ती शिक्षा से ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा मनोवैज्ञानिक तीनों प्रकार के उद्देश्यों की प्राप्ति सभंव होती है।
8. दूरवर्ती शिक्षा ऐसे लोगों के लिये भी महत्वपूर्ण है जिन्हें ज्ञान के उन्नयन के लिये कुछ अतिरिक्त शैक्षिक प्रशिक्षण की आवश्यकता है।

मुक्त विद्यालय तथा मुक्त विश्वविद्यालय :

दूरवर्ती शिक्षा पत्राचार शिक्षा से प्रांरभ होकर आज मुक्त अधिगम के द्वार तक पहुँच गयी है। मुक्त अधिगम में दो क्षेत्रों पर जोर दिया जा रहा है।

1. मुक्त विद्यालय

2. मुक्त विश्वविद्यालय

NOTES

विद्यालय से बाहर रह गये लोगों, शिक्षा छोड़ देने वाले व्यक्तियों, गृहणियों तथा माध्यमिक शिक्षा के आयुवर्ग मे न आने वाले जनों के लिये एक ऐसी प्रणाली की आवश्यकता महसूस की गयी जो लचीली हो भविष्योन्मुखी हो और जो शिक्षा को छात्रों के द्वार तक जाने मे समर्थ हो। ऐसी प्रणाली पर अनेक विचार-विमर्श के पश्चात् केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड जुलाई 1979 मे देश का पहला मुक्त विद्यालय दिल्ली में स्थपित किया।

मिशन :

औपचारिक माध्यमिक शिक्षा प्रणाली के विकल्प के रूप मे विद्यालय स्तर पर मुक्त अधिगम व्यवस्था के रूप में शिक्षा प्रदान करने के ध्येय से मुक्त विघालय आरंभ किये गये।

उद्देश्य :

मुक्त विद्यालय के प्रमुख उद्देश्य निम्नंकित है।

1. औपचारिक विद्यालय प्रणाली के विकल्प के रूप मे एक समानांतर अनौपचारिक प्रणाली प्रस्तुत करना।
2. विद्यालय प्रणाली से बाहर रह गये छात्रों, शिक्षा छोड देने वालों, कार्यकारी प्रौढो, गृहणियों, समाज के वंचित वर्गों के छात्रों तथा देश के दूरस्थ क्षेत्रों मे रहने वाले ऐसे लोगों को जो नियमित विद्यालयों मे नही जा पातें के लिये शिक्षा के अवसर उपब्ध कराना।
3. दूरवर्ती शिक्षण की विधियों के द्वारा माध्यमिक, वरिष्ठ माध्यमिक, तकनीकी, व्यावसायिक तथा जीवन को समृद्ध करनें वाले पाठ्यक्रम संचालित करना।
4. माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रमों तक ले जाने वाले ब्रिज जा प्रारंभिक पाठ्यक्रमों का आयोजन करना।
5. अनुसंधान प्रकाशन तथा सूचना के प्रसार के द्वारा शिक्षा की एक मुक्त तथा दूरवर्ती अधिगम पर आधरित प्रणाली को प्रोत्सहित करना।

अभीष्ट समूहः

1. बीच मे ही विद्यालय छोडने वाले छात्र
2. लड़कियाँ तथा महिलायें
3. बेरोजगार तथा कार्यरत प्रौढ़
4. जनजाति तथा अनुसूचित जाति
5. भूतिपूर्व फौजी
6. शरीरिक/मानसिक विकलांग
7. सामाजिक/भौगोलिक रूप से वंचित
8. नव साक्षर

NOTES

विशेषताये :

1. मुक्त विद्यालय के द्वार प्रत्येक व्यक्ति के लिये खुले है इसमें आयु सीमा या अनन्य शैक्षिक अर्हताओं का कोई बंधन नही है।
2. इसका कार्य क्षेत्र सीमित नही है। भारत या भारत से बाहर भी जिसे भी इसकी सेवायें चाहियें उसके लिये यह खुला हुआ है।
3. छात्रों को एक निश्चित सूची से अपनी पसंद के विषय चुनने की स्वतत्रंता है और अपनी सुविधा के अनुसार पढ़ने की आजादी।
4. पाँच वर्षो की अवधि मे तथा नौ प्रयासों मे बारी-बारी से विभिन्न विषयों मे या एक ही बार मे पूर्व परीक्षा पास की जा सकती है।
5. भाषा का माध्यम आवश्यकतानुसार हिन्दी या अंग्रेजी का चयन किया जा सकता है।
6. छात्रों के लिये सरल, सुगम तथा बोधगम्य पाठ्य सामग्री प्रत्येक छात्र तक पहुँचायी जाती है।
7. छात्रों की कठिनाइयों के निवारण के लिये पूरे देश मे अध्ययन केन्द्रों की सुविधा दी जाती है।
8. औपचारिक शिक्षा प्रणाली की तुलना मे अध्ययन शुल्क काफी कम होता है।

NOTES

9. Tutor Marked Assignment के द्वारा अनवरत मूल्यांकन व्यवस्था जारी रहती है।
10. अध्ययन केन्द्रों पर 'व्यक्ति सम्पर्क कार्यक्रम' छात्रों की सहायता के लिये आयोजित किये जाते है।
11. यह आधुनिक शिक्षा, संचार तथा सूचना तकनीकियों के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करने के अवसर प्रदान करती है।

सीमाएँ :

1. कभी-कभी छात्र अपनी प्रेरणा, शक्ति योग्यता तथा अभिरुचियों का अनावश्यक रूप से ज्यादा आंकलन कर लेते है, जिससे बाद मे उन्हे परेशानी होती है।
2. दूरवर्ती शिक्षा में कम्प्यूटर अनुदेशन को छोड़कर अन्य प्रत्येक प्रोग्राम मे पृष्ठपोषण तुरंत नही प्राप्त कर पाते ।
3. दूरवर्ती शिक्षा प्रोग्रामों मे छात्रों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं पर ध्यान देना मुश्किल हो जाता है।
4. बहुत बार दूरवर्ती शिक्षा 'लकीर की फकीर' बनकर कार्य करती है।

टेलीकौन्फेरेन्सिंग :

टेलीकौन्फेरेन्सिंग एक ऐसी इलेक्ट्रानिक प्रणाली है जिसमें दो या दो से अधिक दूर बैठे व्यक्ति अपने इच्छित विषय-वस्तु से संबंधित चर्चा परिचर्चा मे भाग ले सकते है। अपनी बात कह सकते है, दूसरों की बात सुन सकते है और उन पर तुरंत प्रतिक्रियायें/सुझाव या अभिमत प्राप्त कर सकते है एवं आवश्यक सूचनाओं का आदान-प्रदान कर सकते है।

टेलीकौन्फेरेन्सिंग के लिये एक से अधिक टेलीफोनों की लाइनों की जरूरत पड़ती है अथवा पारस्परिक सम्बंधित युक्तियों की आवश्यकताह होती है। जिसकों सम्पर्क विधि कहा जाता है। प्रत्येक युक्तियों को प्रत्येक सम्पर्क द्वारा जोड़ना सामान्य अभ्यास माना जाता है। सम्पर्क के लिये हाथो के सैट, शीर्ष सेट, स्पीकर फोन तथा रेडियो टेलीफोन आदि की जरूरत पड़ती है।

1. वीडियो कौन्फेरेसिंग

2. आडियो कौन्फेरेसिंग

3. कम्प्यूटर कौन्फेरेसिंग

NOTES

वीडियो कौन्फेरेसिंग में टेलीविजन तथा श्रृव्य साधनों का प्रयोग करके आमने-सामने बात की जाती है। आडियो कौन्फेरेसिंग तो वास्तव मे व्यक्ति से व्यक्ति तक टेलीफोन का स्वाभविक प्रसार है। जिसमें दो से अधिक लोगों द्वारा चर्चा की जाती है। कम्प्यूटर कान्फेरेसिंग मे भाग लेने वालो को विषय-वस्तु तथा ग्राफिक्स का सम्प्रेषण किया जाता है। जो टाइप रायटर टर्मीनल के द्वारा नियत्रंक कम्प्यूटर से जुड़े होते है।

लाभ :

1. यह उतना लाभकारी साधन है जितना प्रत्यक्ष शिक्षण।
2. व्यापक क्षेत्र मे फैले छात्रों के लिये यह उपयुक्त है।
3. यह विधि दूसरी विधियों से कम खर्चीली है।
4. यह एक लचीली प्रणाली है। जिसमे आवश्यकतानुसार संशोधन या परिमार्जन या परिवर्तन किया जा सकता है।
5. इस विधि द्वारा परिसर से बाहर के अध्ययन केन्द्रों से सम्पर्क सरलता से बनाया जा सकता है तथा उन्हें केन्द्र द्वारा नियंत्रित भी किया जा सकता है।
6. इस प्रणाली मे तुरंत पृष्ठ-पोषण देना सभंव होता है।
7. इस प्रणाली के द्वारा अनुदेशन सामग्री के स्तर मे सुधार लाया जा सकता है। और उसे उच्च कोटि का बनाया जा सकता है।

C.C.T.V. (Closed Circuit Television)

साधारण टेलीविजन प्रसारण मे कार्यक्रम पहले स्टूडियों मे रेकार्ड किया जाता है। फिर ट्रांसमीटर द्वारा रिले किया जाता है। टी.वी. रिसीवर एंटीना के द्वारा प्रसारित कार्यक्रम कों प्राप्त कर टेलीविजन पर दिखाया जाता है। क्लोज्ड सर्किट टेलीविजन (बंद परिपथ दूरदर्शन) मे प्रसारण केवल कक्षाओं/स्कूल भवन तक सीमित रहता है। इसीलिए इसे कालोज सर्किट टेलीविजन कहा जाता है। इसमे प्रसारण रिले के को-एक्सिल केबिल द्वारा टी.वी. सैट या मॉनीटर तक

NOTES

आता है। C.C.T.V. कार्यक्रम या तो सीधे ही प्रसारित होते है या पहले से रेकार्ड करके फिर प्रसारित किये जाते है। इनका उद्देश्य केवल विशिष्ट दर्शको के लिए पूर्व निश्चित प्रकरणों पर कार्यक्रम प्रसारित करना होता है। इस तरह के प्रसारण मे माइक्रोवेव का सीमित प्रयोग किया जाता है। इसलिए इसका प्रसारण भी सीमित रहता है।

शिक्षक-प्रशिक्षण के क्षेत्र मे छात्राध्यपकों के शिक्षण में सुधार हेतु पृष्ठ--पोषण अत्यंत सक्षम साधन है। मेडिकल कॉलेजो मे विशेष ऑपरेशन प्रक्रिया प्रदर्शित करने के लिये यह एक सशक्त उपकरण है।

विशेषताएँ :

1. C.C.T.V. के प्रयोग से अनुदेशन का विस्तार क्षेत्र बढ़ जाता है।
2. विद्यालयों मे जिन वस्तुओं या प्रक्रियाओं का प्रदर्शन सभी छात्र एक साथ नही देख पाते इसके माध्यम से ये प्रदर्शन सभी छात्रों को एक साथ दिखाये जा सकते हैं और उनकी बारीकियों को सरलता से समझाया जा सकता है।
3. C.C.T.V. के माध्यम से विद्यालय अपनी समय-सारणी के अनुसार शिक्षण प्रक्रिया समावेशित कर सकते है।
4. अच्छे शिक्षकों के पाठ प्रदर्शन C.C.T.V. के माध्यम से कई कक्षाओं तथा अन्य विद्यालयें तक पहुँचाये जा सकते है। जिससे शिक्षा व शिक्षण का स्तर ऊँचा किया जा सकता है।

CAI (Computer Assisted Instruction)

कम्प्यूटर को शैक्षिक तकनीकी प्रथम अर्थात Hardware मे सम्मिलित किया जाता है। यह स्वतः अनुदेशन पद्धति का एक उपकरण है। जिसका प्रयोग व्यक्तिगत अनुदेशन के लिये किया जाता है। कम्प्यूटर ने व्यापार, उद्योग तथा शासन प्रणाली को अधिक प्रभावित किया है। परंतु इसका प्रभाव विद्यालय तथा शिक्षा प्रणाली को भी प्रभावित किया है, शिक्षण क्षेत्र मे अनुदेशन पद्धति, शोध कार्यो तथा परीक्षा प्रणाली को कम्प्यूटर ने अधिक प्रभावित किया है।

प्रमुख कार्य :

1. कार्डो पर सूचनाओं को संचित करता है। चुंबकीय टेप तथा टेप पर सूचनाओं को संचित करता है।
2. अनुदेशन सामग्री को भी संचित करता है। एक ही प्रकरण पर हर प्रकार की अनुदेशन सामग्री रखता है। जिससे हर तरह की व्यक्तिगत सुविधा प्रदान की जाती है।
3. संचित सूचनाओं में से अपेक्षित प्रदत्तो का चयन करता है।
4. विद्युत टंकण मशीन की सहायता से सूचनाओं का सम्प्रेषण करता है।

NOTES

शिक्षण प्रक्रिया :

लारेंस स्टोलुरो तथा डेनियल डेविज ने सबसे जटिल शिक्षण प्रतिमान का विकास किया जिससे शिक्षक के स्थान पर कम्प्यूटर का अनुदेशन प्रस्तुतीकरण के लिये प्रयोग किया गया। इन्होने कम्प्यूटर की शिक्षण प्रकिया को दो पक्षों में विभाजित किया।

1. पूर्व अनुवर्ग शिक्षण अवस्था
2. अनुवर्ग शिक्षण

प्रथम पक्ष में कम्प्यूटर अनुदेशन विशिष्ट उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये विशिष्ट छात्र को उसके पूर्व ज्ञान के आधार पर किया जाता है। द्वितीय अवस्था के कम्प्यूटर उसके अनुरूप सामग्री प्रस्तुत करता है। जिसका छात्र अध्ययन करता है। अंत में छात्र अधिगम का मापन किया जाता है।

उपयोग :

कम्प्यूटर का उपयोग आधुनिक समय में अधिक व्यापक हो गया है। उद्योग, व्यापार, सेवा तथा शिक्षा में किया जाने लगा है। शिक्षा के क्षेत्र में कम्प्यूटर का उपयोग चार क्षेत्र में व्यापक रूप से किया जाने लगा है।

1. शिक्षण तथा अनुदेशन प्रक्रिया में छात्रों के निदान के आधार पर सुधारात्मक शिक्षण भी किया जाता है।

NOTES

2. शिक्षा के शोध कार्यो में प्रदत्तों के विश्लेषण में सभी अनुसंधानकर्ता करने लगे है।
3. कम्प्यूटर का उपयोग शै0निर्देशन तथा परामर्श में भी किया जाने लगा है।
4. परीक्षा प्रणाली में छात्रों के परीक्षाफल तैयार करने, अकंचित तैयार करने तथा प्रमाण-पत्र भी तैयार करने में किया जाता है।

रेडियो विजन :

डॉ कुमार के अनुसार Radio vision is an aduio-visual instructional system which uses special booklets, filmstrips on other visual material linked with ratio broadcasts.

रेडियो-विजन का प्रयोग 80 के दशक मे गुजरात मे किया गया था। इस विधि मे अर्न्तगत रेडियो पर आने वाले शैक्षिक कार्यक्रमों की सूचना पहले विद्यालयों को भेज दी जाती है। साथ ही शैक्षिक-कार्यक्रम से संबंधित चार्ट, मॉडल तथा चित्र आदि भी भेजे जाते है। शिक्षकों को ये निर्देश भी प्रेषित किये जाते है। कि किस चित्र, चार्ट य मॉडल का उपयोग कब करना है।

निर्देश पाठ तथा चार्ट आदि मिलने पर शिक्षक उसका अध्ययन करके तैयारी करता है। जिस दिन रेडियों पर वह प्रोग्राम प्रसारित किया जाता है। शिक्षक अपने पास प्रेषित सामग्री क्रमानुसार लगाकर रखता है। कि किसका प्रयोग पहले करना है तथा किसका बाद में। प्रोग्राम आने पर रेडियो से जब रेडियो से कहा जाता है। कि ''अब आप नक्शे मे देखिये'' तब शिक्षक नक्शा दिखाता है। और निर्देशानुसार विभिन्न स्थानों, क्षेत्रों आदि की ओर इंगित करता है। इसी प्रकार चार्ट/मॉडल दिखाने के निर्देश मिलने पर शिक्षक चार्ट/मॉडल दिखाता है।

इसमें रेडियों का एक प्रसारण चयन करके उसे टेपरेकार्डर के द्वारा टेपरिकार्ड लिया जाता है। इस टेप को कई बार ध्यान पूर्वक शिक्षक सुनता है। फिर शिक्षक इस टेप के महत्वपूर्ण बिन्दु चुनता है। यदि आवश्यकता होती है। तो अलग से कुछ नये बिन्दु भी इसमे बढ़ा देता है। तकि विषय-वस्तु का स्पष्टीकरण और अधिक व्यापक परंतु सरल हो जाये। फिर शिक्षण इन सबको भली-भाँति परखने के बाद अंतिम सामग्री तैयार करता है। जो पोस्टरों, चार्टों

आदि शिक्षण सहायक सामग्री की सहायता से एक शिक्षण पैकेज के रूप मे प्रस्तुत करने के लिये तैयार किया जाता है और फिर रेडियो द्वारा पुनः प्रसारण के समय या टेण्ड टेप के द्वारा पुनः प्रसारित करने पर इस पैकेज का प्रयोग शिक्षण बडे आराम के साथ अच्छी तैयारी के साथ छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करता है। इस प्रकार से रेडियो या कैसेट प्रसारण के समय तैयार दृश्य अधिगम पैकेट की सहायता से श्रृव्य सामग्री, श्रृश्य-दृश्य सामग्री के रूप मे छात्रों के समझ प्रभावशाली ढ़ग से रखी जाती है। छात्रों को इस विधि से चीजों ज्यादा स्पष्ट सरल तथा बोधगम्य हो जाती है।

NOTES

INSAT (इनसैट)

Inset - 1 B तथा 6 मीडिया सेंटर की स्थापना ने भारतीय सैटेलाईट के उच्च शिक्षा के क्षेत्र मे सम्प्रेषण की संभावनाओं पर काफी बल दिया है। 85 स्टेशनों के नेटवर्क के द्वारा यह भारत के 75 प्रतिशत क्षेत्रों और 90 प्रतिशत जनसंख्या तक पहुँच सकता है। Insat - 1 B की स्थापना से विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा शैक्षिक-कार्यक्रम प्रसारित किये जाते है।

Indian National Satellite का संक्षित्त रूप Insat कहलाता है। Insat पहली बार 1983 में प्रयोग किया गया तथा इससे पूरे राष्ट्र में एक साथ टेलीविजन कार्यक्रम उपलब्ध कराये गये। पूरे राष्ट्र में प्रसारण हेतु एक माइक्रोवेव नैटवर्क लगाया गया गये। इनके द्वारा अनेक प्रकार के प्रोग्राम प्रसारित किये गये।

यू.जी.सी. ने इसका प्रयोग शिक्षा के छात्रों को विशेष सामग्री के प्रसारण के लिये शुरू किया। छठी पचंवर्षीय योजना मे यू.जी.सी. द्वारा लगभग 1000 कॉलिजों को टेलीविजन सैट दिये गये। उच्च शिक्षा कार्यरत शिक्षकों के लिये भी प्रोग्राम प्रसारण प्रारंभ हुआ। CIFL हैदराबाद तथा जामिया मिलिया दिल्ली को रेडियों व टेलीविजन सॉफ्टवेयर बनाने का कार्य दिया गया।

आज का युग सूचना-तकनीकी का है। भारत इस युग में निरंतर प्रगति पथ पर चल रहा है। आज उपग्रह संचार भी सूचनाओं का आदान-प्रदान बन गया है। भारत ने एक ओर संचार उपग्रह एपल के माध्यम से दूर संचार एवं डेटा संचार के क्षेत्र में अनेक प्रयोग किये वही बहुउद्देशीय उपग्रह इरनेंट के

आधार पर मौसम विज्ञान एवं देशव्यापी दूरदर्शन व दूर संचार का महत्वाकांक्षी अतंरिक्ष कार्यक्रम तैयार किया है।

NOTES

इन्सैट-IA अप्रैल 1982 मे छोड़ा गया परंतु कुछ खरबियों के कारण यह अपने उद्देश्य मे पूरी तरह सफल नही हो सका।

इन्सैट IB अगस्त 1983 मे छोडा गया था। जिसने सफलतापूर्वक कार्य किया।

तीसरा यान Inset 1-C का निर्माण इन्सैट IA की क्षतिपूर्ति करने के लिये किया गया। 1990 के दशक मे Inset-B श्रृंखला प्रारंभ की गयी जो दूरसंचार, दूरदर्शन और मौसम विज्ञान संबंधी सूचनायें प्रदान करने मे ज्यादा सक्षम है।

इन्सेट IB यान पृथ्वी से 296 किमी. की ऊँचाई पर भूस्थिर कक्षा में पृथ्वी की चाल से चाल मिलाकर इस प्रकार चक्कर काट रहा है। कि हर समय पृथ्वी के एक ही स्थल विशेष के ऊपर बना रहता है। यह यान एक बुद्धिमान एंटिना की भांति, चित्र खींचकर पृथ्वी पर भेजता है।

इन्सेट IB की सहायता से रेडियो व दूरदर्शन के प्रसारणों से भारत के दूरदराज के रहने वाले लोग भी लाभान्वित हुये है।

राष्ट्रीय खुला विद्यालय :

इसके प्रमुख प्रोग्राम तथा पाठ्यक्रम अंग्राकित रखे गये है।

1. फाउन्डेशन कोर्स : यह पूरे देश मे कक्षा 8 के बराबर मान्यता प्राप्त कोर्स है।

2. माध्यमिक कोर्स : यह नौ भाषाओं तथा आठ अन्य विषयों मे शिक्षा प्रदान करता है। इसमे पाँच विषयों के साथ परीक्षा देनी होती है। इसकी मान्यता कक्षा दस के बराबर होती है।

3. सीनियर सेकंडरी कोर्स : यह कोर्स कक्षा 12 के बराबर मान्यता प्राप्त कोर्स है।

4. मुक्त व्यावसायिक शिक्षा प्रोग्राम : इसके द्वारा आयोजित विभिन्न व्यावसाथिक शिक्षा प्रोग्राम नीचे दिये जा रहे है।

व्यावसयिक विषय :

NOTES

माध्यमिक स्तरः

- टाइपराइटिगं/वर्ड प्रोसेसिंग
- जूट प्रोडक्शन तकनीकी
- बढ़ई गिरी
- सोलर एनर्जी तकनीकी
- बायो गैस टेकनीशियन कोर्स
- लांड्री कोर्स
- बेकरी तथा कन्फैक्शनरी कोर्स
- टेल्डिंग तकनीकी

वरिष्ठ माध्यमिक स्तरः

- टाइपराइटिंग/वर्ड प्रोसेसिग
- स्टेनोग्राफी/सेक्रेटेरियल कोर्स
- प्लांट प्रोटेक्शन तथा वाटर मैनेजमेंट कोर्स
- ओस्टर मशरूम प्रौडक्शन तकनीकी
- फर्नीचर व कैबिनेट बनाना
- इलेक्ट्रोप्लैटिग हाउस की प्रिगं
- केटरिंग मैनजमेंट
- फूड प्रोसेसिगं, प्ले-सेटर, मैनजमेंट, होटल फ्रंट ऑफिस मैनेजमैंट पोल्ट्री फार्मिंग सौइल व फर्टिलायजर मैनेजमैन्ट

व्यावसायिक सर्टिफिकेट कोर्स

माध्यमिक स्तर (छःमाह के कोर्स)

- हाउस वायरिगं तथा विद्युत उपकरण रिपेयरिगं
- मोटर तथा ट्रासंफौर्मर रिवाइन्डिगं
- रेडियो व टेप रेकार्डर रिपेयरिगं
- कटिंग तथा टेलरिंग

NOTES

- ड्रैस मेकिंग, प्लाम्बिंग
- ब्यूटी कल्चर
- लाइबेरी अटैन्डैन्ट

व्यावसायिक सर्टिफिकेट कोर्स

वरिष्ठ माध्यमिक स्तर (एक वर्षीय कोर्स)

- इलेक्ट्रीकल टैकनीशियन
- रेडियो तथा टी.वी. टैकनीशियन
- कटिंग, टेलरिंग व ड्रेस मेकिंग
- लाइबेरी क्लर्क
- रैफरीजरेशन व एअर कंडीशनिंग
- सर्टिफिकेट इन कम्प्यूटर एप्लीकेशन्स

सर्टिफिकेट/डिप्लोमा पैकेज कोर्स

- सेक्रेटरियल प्रैक्टिस (PA/PS)
- डिप्लोमा इन रेडियोग्राफी
- (एक्सरे टैकनीशियन) सर्टिफिकेट इन लाइबेरी साइंस
- लाइफ एनरिचमैटं (वोकेशनल कोर्स)
- परिपूर्ण माहिला कोर्स, जन स्वास्थ्य कोर्स

मूल्यांकन व्यवस्थाः

छात्रों के मूल्यांकन की भी प्रकृति काफी लचीली है। छात्रों के लिये आंतरिक तथा बाह्य दोनो प्रकार की व्यवस्था रखी गयी है।

परीक्षायें वर्ष मे दो बार मई तथा नवम्बर मे आयोजित की जाती है।

कार्यक्रमों के मुख्य तत्व :

दूरवर्ती शिक्षा-प्रणाली के अर्न्तगत NOS द्वारा संचालित कार्यक्रमों मे मुख्य तत्व निम्नांकित है।

1. मुद्रित स्व-अधिगम सामग्री
2. व्यक्तिगत सम्पर्क प्रोग्राम

3. श्रव्य-दृश्य प्रोग्राम

4. अन्तः प्रक्रिया हेतु मुक्त अधिगम त्रैमासिक पत्रिका

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय के प्रमाणित सस्थान :

1. अकादमिक सस्थान

2. व्यावसायिक

3. SATED (Special Accrerditted Institutions for education of the Disadnan taged.)

मूल्यांकन :

कूंटज तथा ओडोनल के शब्दो मे : यह शिक्षण-अधिमग का अंतिम सोपान है। जिससे शिक्षक को यह ज्ञात होता है कि उसके द्वारा प्रयुक्त शिक्षण अधिगम व्यवस्था कितनी प्रभावशाली रही है। यह प्रभावशीलता जानने के लिये शिक्षक अपनी शिक्षण-अधिगम व्यवस्था का मूल्यांकन करता है। और मूल्यांकन हेतु क्रमबद्ध रूप से सक्ष्य एकत्रित करता है। उसने शिक्षण उद्देश्य को किस सीमा तक सफलतापूर्वक प्राप्त किया है।

डेवीज के अनुसार : शिक्षण मे नियत्रंण शिक्षक का कार्य है जिसमे वह यह निर्धारित करता है कि क्या उसकी योजनाएँ प्रभावशाली ढ़ंग से लागू की जा रही है। शिक्षण व्यवस्था ठीक है, अग्रसरण सही दिशा मे हो रहा है। और ये सभी शिक्षण कार्य पूर्व निश्चित उद्वेश्यों की प्राप्ति में कहाँ तक सफल है।

शिक्षक एक व्यवस्थापक के रूप मे अपने शिक्षण पर नियंत्रण रखने के लिये निम्नांकित तीन प्रमुख कार्य करता है।

1. अधिगम प्रणाली का मूल्यांकन

2. अधिगम का मापन

3. अधिगम उद्देश्यों द्वारा व्यवस्था

1. अधिगम प्राणाली का मूल्यांकन :

आधुनिक काल मे मूल्यांकन मनोविज्ञान एवं शिक्षा की महत्वपूर्ण देन है। बिना मूल्यांकन के शिक्षा मनोविज्ञान तथा अन्य विषय ही नही मानव मात्र का समग्र जीवन ही व्यर्थ प्रतीत होने लगता है। मानव के जन्म से मृत्युपंर्यत चलने

NOTES

वाली इस प्रक्रिया की जीवन एवं दर्शन के प्रत्येक क्षेत्र मे आवश्यकता रहती है। बालक, सामान्य बालकों की तुलना मे कैसा है। राम के गणित में कैसे अंक आयें? इस शहर का कौन सा स्कूल अधिक अच्छा है। अनेक प्रश्नों से मूल्यांकन की जीवतंता एवं महत्वा स्वयं सिद्व होती है। मूल्यांकन सत्य मे इस बात का निर्णय करता है कि कौन-सी चीज अच्छी है और कौन सी चीज बुरी?

NOTES

मूल्यांकन के व्यक्ति एवं समाज दो प्रमुख आधार हैं। शिक्षा भी इन दोनों आधारों को आत्मसात् किये हुऐ है। अतः शिक्षा में मूल्यांकन करते समय बालक और उनके वातावरण तथा सामाजिक पृष्ठभूमि का ध्यान रखना अति आवश्यक हो जाता है।

मूल्यांकन एक निर्णयात्मक प्रक्रिया है, जिसके अतंर्गत विषय-वस्तु की उपयोगिता के विषय मे निर्णय प्रदान किया जाता है।

N.C.E.R.T. की Concept of Evaluation नामक पुस्तिका के अनुसार मूल्यांकन प्रक्रिया में निम्नांकित तीन बातों के विषय मे निश्चय किया जाता है।

1. उद्देश्य की प्राप्ति किस सीमा तक हुई है।
2. कक्षा में दिये जाने वाले सीखने के अनुभव कितने प्रभावोत्पादक रहे है।
3. शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति कितने अच्छे ढ़ग से सम्पन्न हुई है।

मूल्यांकन के सिद्धांत :

1. जब तक मूल्यांकन का उद्देश्य भली-भाँति सावधानी के साथ परिभाषित न कर लिया जायें तब तक मूल्यांकन के उपकरणों का चयन पर ध्यान नही दिया जाना चाहियें ।
2. जिस उद्देश्य के लिये मूल्यांकन किया जा रहा हो उस उद्देश्य की ही पूर्ति के लिये मूल्यांकन-उपकरण प्रयोग किया जाना चाहिये। मूल्यांकन के अनेक उपकरण होते है।
3. एक उपकरण के माध्यम से किसी भी व्यक्ति का पूर्ण मूल्यांकन सभंव नही होता। अतः पूर्ण मूल्यांकन की विविध विधाओं एवं उपकरणों का प्रयोग करना चाहिये।

4. मूल्यांकन की प्रत्येक विधि तथा उपकरण का प्रयोग करते समय उनकी उपयोगिता के विषय मे मूल्यांकनकर्ता को पूर्ण ज्ञान होना चाहिये।

5. मूल्यांकन, मूल्यांकन के लिये नही वरन् किसी निश्चित उद्देश्य की प्राप्ति के लिये किया जाना चाहिये।

6. मूल्यांकन करते समय मूल्यांकनकर्ता को अत्यंत सावधानीपूर्वक कार्य करना चाहिये और यथासभंव दोषों के जाल से बचने का पूरा प्रयत्न करना चाहिये।

7. मूल्यांकन के सिद्धातों एवं Ethics का ध्यान रखना चाहिये।

NOTES

मूल्यांकन के उपकरण एवं प्रविधियाँ :

मूल्यांकन अनेक उद्देश्यों से किया जाता है। उद्देश्यों के अनुसार उपकरण भी बदलते रहते है। मूल्यांकन के अनेक उपकरण हैं।

1. परीक्षण उपकरण
2. स्वयं आलेख उपकरण
3. निरीक्षणात्मक उपकरण
4. प्रेक्षपी उपकरण

1. परीक्षण उपकरण : ये उपकरण परीक्षणों के रूप मे होते हैं। परीक्षण व्यक्ति के एक निश्चित समय के व्यवहार का अध्ययन करता है। ये परीक्षण व्यक्ति की रूचि, अभिवृत्ति उपलब्धि एवं व्यक्तित्व आदि के मूल्यांकन हेतु प्रयोग किये जाते है।

2. स्वयं आलेख उपकरण : प्रत्येक व्यक्ति अपने बारे मे काफी सूचनाएँ रखता है। वह अपने बारे मे क्या सोचता है? कैसे सोचता है? कब खुश होता है? कौन-सी चीजें उसे पीडा देती है। आदि पहलुओं पर व्यक्ति से मूल्यांकन के लिये प्रत्यक्ष य अप्रत्यक्ष रूप से सूचना ली जा सकती हैं

3. निरीक्षणात्मक उपकरण : व्यक्ति के बारे मे अपने निरीक्षण एवं अनुभवों के आधार पर सूचना एकत्रित की जा सकती है। यह निरीक्षण एवं अनुभवों का संकलन वैज्ञानिक विधियों पर आधारित होना चाहिए। निरीक्षण के लिये विभिन्न प्रकार के उपकरण कार्य मे लाये जाते है।

NOTES

4. प्रक्षेपी उपकरण : इन उपकरणों के माध्यम से व्यक्ति के व्यक्तिगत सामाजिक समायोजन से संबंधित पक्षों का मूल्यांकन किया जाता है। इनमें व्यक्ति अपनी भावनाओं का प्रक्षेपण करता है। और उन प्रक्षेपणों का मूल्यांकन निश्चित सिद्धांतो एवं नियमों के माध्यम से किया जाता है।

मूल्यांकन की उपयोगिता :

मूल्यांकन, मनोविज्ञान एवं शिक्षा के क्षेत्रों मे एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। मूल्यांकन से यह मालूत होता है कि व्यक्ति कितना, किस विषय मे जानता है। शिक्षक को अपनी कक्षा मे कितनी सफलता मिली है? शिक्षक को किन शिक्षण विधियों का प्रयोग करना चाहियें? अपने शिक्षण को किसी प्रकार से छात्रों के स्तर पर समायोजित किया जाना चाहिये? इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करके शिक्षक अपने शिक्षण को अधिक प्रभावोत्पादक बना सकता है।

मूल्यांकन से प्राप्त निष्कर्षों से यह भी पता चल जाता है कि छात्र किस विषय मे कमजोर है? उनकी समस्याएँ किस प्रकार की हैं? कौन सी चीज उनकी प्रगति मे बाधक है। और वह कैसे दूर की जा सकती है। किस प्रकार एकत्रित तथ्यों के माध्यम से निर्देशनकर्ता छात्रों की अधिक सहायता कर सकता है।

मूल्यांकन का महत्व :

1 मूल्यांकन उद्देश्यों की प्राप्ति की सीमा बताता है कि किस सीमा तक उद्देश्यों की पूर्ति हुई है।

2 छात्रों के वर्गीकरण एवं स्तरीकरण करने मे सहायक है।

3 इससे शिक्षण विधियों, प्रविधियों आदि की उपयोगिता, विशेषता तथा कमजोरी ज्ञात की जाती है।

4 इससे अधिगम मे गुणवत्ता बढ़ती है।

5 शिक्षण व्यूह रचना मे सुधार किया जाता है। और उन्हे विकसित किया जाता है।

6 यह शिक्षक और छात्र दोनो के लिये पुनबर्लन का कार्य करता है।

अभ्यास प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये

NOTES

1 शैक्षिक तकनीकी का अर्थ एवं प्रकृति।

2 शैक्षिक तकनीकी के प्रकार।

3 शिक्षण में व्यूह रचना का अर्थ एवं परिभाषा।

4 शिक्षण युक्तियों का अर्थ।

5 शिक्षण के स्तर कौन-कौन से होते हैं। विस्तार से वर्णन करों।

6 शिक्षण के स्मृति, बोध प्रज्ञात्मक स्तरों की प्रमुख विशेषताओं का विवेचन कीजियें?

7 शिक्षण-प्रतिमानों की उपयोगिता बताते हुए उनके प्रकार तथा आधारभूत तत्वों का केवल उल्लेख कीजिए।

8 शिक्षण व्यूह रचना की परिभाषा लिखियें।

9 शिक्षण के विभिन्न स्तरों की व्याख्या कीजिये। बोध स्तरीय शिक्षण-स्मृति स्तरीय शिक्षण से किस प्रकार भिन्न होता है। स्पष्ट कीजिए।

10 कार्य विश्लेषण, सूक्ष्म-शिक्षण एवं शिक्षण प्रतिमान के आधारभूत तत्वों को विस्तार से समझाइयें ।

11 मूल्यांकन प्रविधियों का वर्गीकरण कीजिये।